पादप वृद्धि

पाठ्य पुस्तक के प्रश्न एवं उत्तर

बहुविकल्पीय प्रश्न

प्रश्न 1. सबसे पहले जिस पादप हार्मोन की खोज हुई, वह है।

(अ) ऑक्सिन
(ब) जिब्बरेलिन
(स) इथाइलिन
(द) साइटोकाइनिन

उत्तर: (अ) ऑक्सिन

प्रश्न 2. पत्ता गोभी के रोजेट पादप को लम्बे प्ररोह में परिवर्तित करने के लिए छिड़कना होगा-

(अ) IAA
(ब) ABA
(स) GA
(द) इथाइलिन

उत्तर: (स) GA

प्रश्न 3. गैसीय अवस्था में मिलने वाला हार्मोन है-

(अ) ऑक्सिन
(ब) जिब्बरेलिन
(स) साइटोकाइनिन
(द) इथाइलिन

उत्तर: (द) इथाइलिन

प्रश्न 4. पतझड़ के समय पौधों में कौन-सा हार्मोन सबसे अधिक सक्रिय होता है-

(अ) 1AA
(ब) ABA
(स) GA
(द) उपरोक्त सभी

उत्तर: (ब) ABA

प्रश्न 5. शीर्षस्थ प्रभाविता पाई जाती है-

(अ) ऑक्सिन के कारण
(ब) जिब्बरेलिन के कारण
(स) साइटोकाइनिन के कारण
(द) इथाइलिन के कारण

उत्तर: (अ) ऑक्सिन के कारण

प्रश्न 6. निम्न में से किस पादप हार्मोन को अभी तक पृथक नहीं किया गया

(अ) ऑक्सिन
(ब) फ्लोरिजन
(स) साइटोकाइनिन
(द) जिब्बेरेलिन

उत्तर: (ब) फ्लोरिजन

प्रश्न 7. मूल शीर्ष की वृद्धि को संदमित करने वाला हार्मोन है-

(अ) साइटोकाइनिन
(ब) ऑक्सिन
(स) जिब्बरेलिन
(द) उपरोक्त सभी

उत्तर: (ब) ऑक्सिन

प्रश्न 8. खेतों में द्विबीजपत्री खरपतवार को नियंत्रित करने में प्रयोग किया जाता है-

(अ) 1AA
(ब) GA
(स) 1BA
(द) 2-4D

उत्तर: (द) 2-4D

प्रश्न 9. पादपों में किस वृद्धि नियन्त्रक को स्ट्रेस हार्मोन कहा जाता है-

(अ) 1AA
(ब) ABA

(स) 1BA
(द) NAA

उत्तर: (ब) ABA

प्रश्न 10. फाइटोक्रोम की खोज की थी-द्वारा

(अ) बोर्थविक एवं हेण्डरिक्स
(ब) बॉयसन-जैनसन
(स) गार्नर-एलार्ड
(द) डार्विन-वेन्ट

उत्तर: (अ) बोर्थविक एवं हेण्डरिक्स

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. समग्र वृद्धिकाल से आप क्या समझते हैं ?

उत्तर: अधिकतम वृद्धिकाल जिसके दौरान अधिकतम वृद्धि होती है समग्र वृद्धिकाल (Grand period of growth) कहलाता है।

प्रश्न 2. कौन-सा पदार्थ फलों के कृत्रिम परिपक्वन के लिए प्रयोग किया जाता है ?

उत्तर: एथिलीन (Ethylene)।

प्रश्न 3. शीतन उपचार के लिए अनुकूलतम तापक्रम कौन-सा है ?

उत्तर: शीतन उपचार के लिए अनुकूलतम तापक्रम 0°C से 5°C होता है।

प्रश्न 4. जियेटिन क्या है ?

उत्तर: जियेटिन (Jeatin) प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला प्रथम साइटोकाइनिन है।

प्रश्न 5. वर्नेलिन क्या होता है ?

उत्तर: वर्नेलिन पुष्पन क्रिया को प्रारम्भ करने वाला हॉर्मोन फ्लोरीजन (Florigen) का पूर्वगामी है।

प्रश्न 6. जीर्णता तथा रन्ध्रों को बन्द करने वाले हॉर्मोन का नाम बताइए।

उत्तर: साइटोकाइनिन तथा एब्सिसिक अम्ल।

प्रश्न 7. काइनेटिन का रासायनिक नाम क्या है ?

उत्तर: काइनेटिन-C फरफ्यूरल एमीनो प्यूरीन।

प्रश्न 8. दो संश्लिष्ट ऑक्सिन के नाम बताइए।

उत्तर: इण्डोल-3 ब्यूटाइरिक अम्ल (IBA) तथा नैफ्थेलीन ऐसीटिक अम्ल (NAA)

प्रश्न 9. अनिषेक फलन को किस हॉर्मोन द्वारा प्रेरित किया जा सकता है ?

उत्तर: ऑक्सिन (Auxins) तथा जिब्बरेलिन (Gibberellins)

प्रश्न 10. प्रसुप्ति किसे कहते हैं ?

उत्तर: बीजों की शरीर क्रियात्मक रूप से निष्क्रियता की स्थिति की अवस्था प्रसुप्तावस्था (Dormant stage) कहलाती है तथा यह परिघटना प्रसुप्ति (Dormancy) कहलाती है।

प्रश्न 11. फोटोब्लास्टिक बीज किसे कहते हैं ?

उत्तर: वे बीज जिनका अंकुरण प्रकाश की अवधि, उसकी गुणवत्ता तथा मात्रा के प्रति अतिसंवेदी होता है। फोटोब्लास्टिक बीज (Photoblastic seeds) कहलाते हैं।|

लघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. सिग्मॉइड वृद्धि चाप क्या होता है ?

उत्तर: वृद्धि दर प्रभावित करने वाले कारकों को समान रखते हुए यदि हम कोशिका, पादप अंग या सम्पूर्ण पादप की वृद्धि का मापन करें तब हम देखते हैं कि इसकी दर समान नहीं होती है। यदि वृद्धि दर का समय के साथ ग्राफ खींचा जाय तब S-आकृति या सिग्मॉइड आकार का चाप प्राप्त होता है जिसे सिग्मोइड वृद्धि चाप (Sigmoid growth are) कहते हैं। यह एक वृद्धि वक्र होता है जो निम्न चार भागों में विभक्त किया जा सकता है।

1. मन्द वृद्धिकाल (Lag period)
2. अधिकतम वृद्धिकाल (Log period)
3. मंद वृद्धिकाल (Decline period)
4. स्थिर वृद्धिकाल (Stationery period)

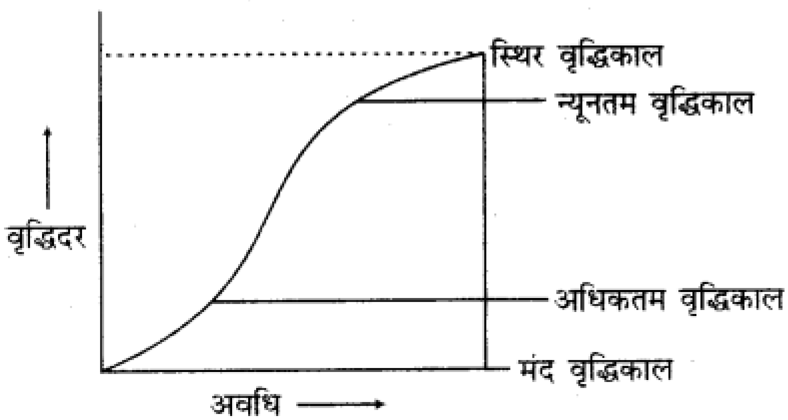

चित्र : सिग्मॉइड वृद्धि चाप

प्रश्न 2. मुक्त तथा बन्धित ऑक्सिन में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: ऑक्सिन (Auxins)

ऑक्सिन शब्द की व्युत्पति ग्रीक शब्द Auxein से हुई है। जिसका शाब्दिक अर्थ है "to grow" अर्थात् वृद्धि करना। ऑक्सिन ऐसा पादप हार्मोन समूह है जिसे सर्वप्रथम खोजा गया था तथा यह पौधों में प्ररोह की कोशिकाओं में दीर्धीकरण (Elongation) को प्रेरित करते हैं। तीन प्रकार के ऑक्सिन्स को सबसे पहले मानव मूत्र (Human urine) से पृथक् किया गया जिन्हें क्रमश: ऑक्सिन-a, ऑक्सिन–b तथा इण्डोल-3 एसिटिक अम्ल नाम दिये गए। ईण्डोल ऐसीटिक अम्ल व इसके समान गुण वाले सभी प्राकृतिक तथा कृत्रिम संश्लेषित पदार्थ ऑक्सिन (Auxins) कहलाते हैं।

ऑक्सिन की खोज (Discovery of Auxins)-जैव विकास सिद्धान्त के प्रवर्तक चार्ल्स डार्विन (Charls Darwin; 1890) प्रथम व्यक्ति थे जिन्हें पौधे के शीर्ष पर वृद्धिकारी पदार्थ का आभास हुआ था। चार्ल्स डार्विन एवं फ्रेन्सिस डार्विन ने केनेरी घास (Phalis canartensis) पर किये गये प्रयोगों का वर्णन अपनी

पुस्तक 'द पॉवर ऑफ मूवमेन्ट इन प्लाण्ट्स' में किया। डार्विन के अनुसार प्रांकुरचोल (Coleoptile) को एक दिशा में प्रकाश देने पर यह प्रकाश की तरफ मुड़ता है। इन्होंने इस प्रयोग के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि प्रांकुरचोल (Coleoptile) को एक दिशिक प्रकाश देने पर कुछ पदार्थ जो शीर्ष पर बनते हैं नीचे की ओर स्थानान्तरित हो जाते हैं जिसके फलस्वरूप इस भाग में वक्रण उत्पन्न हो जाती है। डार्विन द्वारा किये गये प्रयोग को बाद में बॉयसन जेनसन तथा पाल (Boysen Jensen and Pall) ने आगे बढ़ाया।

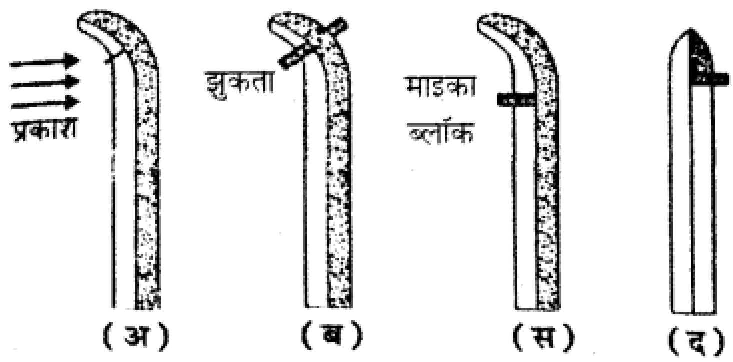

चित्र 13.5 बॉयसन-जेंनसन के प्रयोग

बॉयसन जेनसन (Boysen Jensen 1910-13) ने जई (Avenu Sativa) के प्रांकुरचोल पर प्रयोग किया तथा बताया कि प्रांकुरचोल का शीर्ष काट देने पर यह प्रकाशानुवर्तन (Phototropism) अथवा वक्रण (Curving) प्रदर्शित नहीं करता है। यदि काटे हुए शीर्ष को पुनः स्थापित कर दिया जाये तो वक्रण अथवा प्रकाशानुवर्तन क्षमता पुन: स्थापित हो जाती है। शिरोच्छेदित शीर्ष व सुंठ (Stump) के मध्य जिलेटिन का टुकड़ा रखने पर भी वक्रण क्षमता बनी रहती है।

यदि प्रांकुरचोल को अप्रदीप्त सतह (Dark side) पर आधे भाग में अनुप्रस्थ चीरा (Horizontal slit) लगाकर उसमें अभ्रक की प्लेट (Micaplate) लगा दी जाती है तो प्रांकुरचोल प्रकाश की ओर नहीं मुड़ता है, परन्तु चीरा और अभ्रक र प्ले? प्रकाशित सतह (Illuminated side) पर लगाई जाए तो प्रांकुरचोला प्रकाश की ओर मुड़ जाता है। उपरोक्त प्रयोग के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकला कि प्रकाशानुवर्तन अथवा वक्रण के लिए उत्तरदायी पदार्थ या उद्दीपक अप्रदीप्त पार्श्व से नीचे की ओर स्थानान्तरित होता है।

पाल (Pall, 1919) ने भी इस सम्बन्ध में विस्तृत प्रयोग किये एवं सिद्ध किया कि शीर्षभाग में रसायन उपस्थित होते हैं जो वृद्धि प्रवर्तक होते हैं। इन्होंने यह भी बताया कि शीर्ष में उत्पन्न होने वाली पदार्थ जल में विलेयशील होता है।

ऑक्सिन की खोज का श्रेय एफ.डब्ल्यू वेन्ट (F.w.went, 1926-28) को दिया जाता है। उसने वृद्धिकारी पदार्थ को पृथक (Isolate) करने में सफलता प्राप्त की। उन्होंने जई के प्रांकुरचोल का शीर्ष काटकर उसे अगार (Agar) के घनाकार टुकड़े के ऊपर रखा। इसके पश्चात् शीर्ष को आगार से अलग करके अगार को छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँट दिया तथा छोटे-छोटे टुकड़ों को प्रांकुरचोल (Coledoptile) के ठूठ पर स्थापित करने पर पाया कि वृद्धि उसी प्रकार पुनः स्थापित हो जाती है। इसके विपरीत साधारण अगार खण्ड को प्रांकुरचोल (Coeloptile) के ढूंठ पर रखने पर वृद्धि नहीं होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कुछ पदार्थ प्रांकुरचोल (Coledoptile) से नीचे की ओर अगार खण्ड में स्थानान्तरित होते हैं जो वृद्धि के लिए उत्तरदायी हैं। अपने प्रयोगों के आधार पर वेन्ट ने पाया कि प्रांकुरचोल (Coledoptile) को एक ओर से

प्रकाशित किये जाने पर प्रदीप्त क्षेत्र में ऑक्सिन की मात्रा कम होती है। उन्होंने अपने दूसरे प्रयोगों में जई के शीर्ष को अगार के दो टुकड़ों जिनके बीच में अभ्रक की पतली प्लेट लगी थी. इस प्रकार रखा जिससे शीर्ष आधा-आधा दोनों टुकड़ों पर रहे।

एक पाश्र्व से प्रकाश डालने पर हार्मोन का 65% भाग अप्रकाशित दिशा के टुकड़े में एकत्रित होता है।

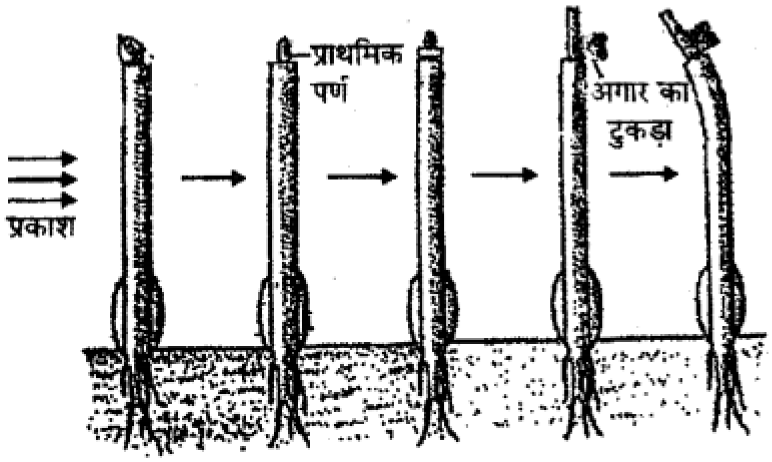

चित्र 13.6 वैन्ट का प्रयोग

अप्रकाशित भाग में हार्मोन की मात्रा अधिक होने के कारण इस भाग की कोशिकाओं का अधिक विस्तारण हो जाता है और प्ररोह प्रकाश की ओर मुड़ जाता है। | इस प्रकार कुछ दूसरे वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया कि प्रांकुरचोल अथवा मूल शीर्ष को क्षैतिज स्थिति में रखने पर हार्मोन का विस्थापन तथा प्रवाह गुरुत्वाकर्षण के कारण नीचे की ओर हो जाता है। नीचे की कोशिकाओं में ऑक्सिन की अधिक सान्द्रता प्ररोह शीर्ष के नीचे की कोशिकाओं में वृद्धि के लिए प्रेरित करती है एवं वह ऊपर की तरफ मुड़ जाता है। परन्तु मूल शीर्ष में ऑक्सिन, वृद्धि को संदमित (Retard) करता हैं। अतः नीचे की कोशिकाओं में कम वृद्धि होने से वह नीचे की ओर मुड़ जाता है।

ऑक्सिन की परिभाषा (Definition of Auxins)-वे कार्बनिक पदार्थ जो 0.01 मोलर से कम सान्द्रता में प्ररोह के विवर्धन को अभिवृद्धित करते हैं, ऑक्सिन (Auxins) कहलाते हैं।

ऑक्सिन की रासायनिक प्रकृति (Chemical nature of auxins)

कोगल (Kogal, 1931) ने उन पदार्थों को जो जई के प्रांकुरचोल (Coleoptile of oat) में वक्रता प्रेरित करने में समर्थ है को ऑक्सिन (Auxins) नाम दिया। कोगल तथा हैगन-स्मिट (Kogll and Haagensmit, 1931) ने मानव मूत्र (Human urine) से ऑक्सिन के समान पदार्थ पृथक किया। इसे इन्होंने ऑक्सिन-A (Auxina-A) नाम दिया जिसका आण्विक सूत्र $C_{18}H_{32}O_5$ होता है। ऑक्सिन को दो वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है।

1. प्राकृतिक ऑक्सिन (Natural Auxins)
2. संश्लेषित ऑक्सिन (Synthetic Auxins)

1. प्राकृतिक ऑक्सिन (Natural Auxins)

कोगल एवं साथियों ने पुनः मानव मूत्र से ही एक अन्य पदार्थ पृथक किया जिसे हेटरोऑक्सिन (Heteroauxin) नाम दिया। इसका अणु सूत्र $C_{10}H_9O_2N$ है तथा इसे इण्डोल-3-ऐसीटिक अम्ल (Indole-3acetic acid or IAA) कहते हैं। यह पौधे में पाया जाने वाला प्राकृतिक ऑक्सिन (Nautral Auxin) है। अन्य प्राकृतिक ऑक्सिन IAA के व्युत्पन्न के रूप में पाये जाते हैं। प्राकृतिक ऑक्सिन शीर्ष विभज्योतक में निर्मित होते हैं एवं इसका संश्लेषण ट्रिप्टोफन नामक अमीनो अम्ल से होता है। इसके संश्लेषण के लिए Zn अनिवार्य होता है।

प्राकृतिक ऑक्सिन

(i) इण्डोल-3-ऐसीटिक अम्ल (IAA)

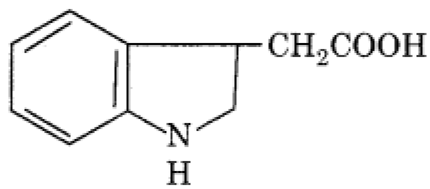

संश्लिष्ट ऑक्सिन

(ii) इण्डोल-3- ब्यूटायरिक अम्ल (IBA)

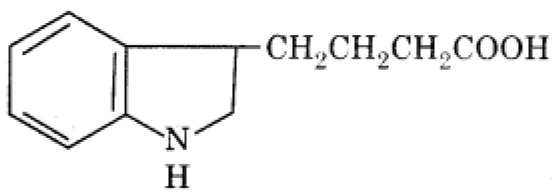

(iii) नेफ्थेलीन ऐसीटिक अम्ल (NAA)

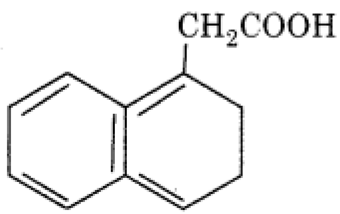

(iv) 2, 4- डाई क्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2, 4-डी)

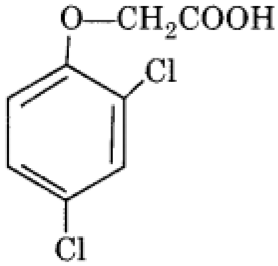

(v) 2, 4, 5- ट्राई क्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2, 4, 5-टी)

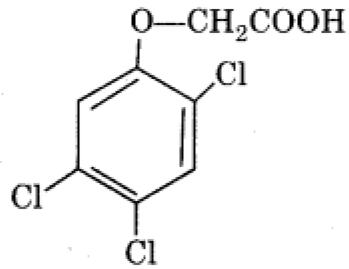

चित्र 13.7 प्रमुख ऑक्सिन्स

2. संश्लिष्ट ऑक्सिन (Synthetic Auxins)कुछ संश्लिष्ट रासायनिक यौगिक भी ऑक्सिन के समान कार्य करते हैं। इन्हें संश्लिष्ट ऑक्सिन कहते हैं, जैसे-नैप्थैलिन ऐसीटिक अम्ल (NAA), इन्डोल 3-ब्यूटाइरिक अम्ल (IBA), 2-4 डाइक्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2-4D), इन्डोल 3-प्रोपियोनिक अम्ल (IPA)। पादपों के सभी भागों में आक्सिन की कुछ मात्रा उपस्थित होती है। परन्तु वृद्धि अथवा परिवर्तन ऊतकों में इसकी सान्द्रता अधिकतम होती है। ये पादप शीर्ष से आधार की ओर गमन करते हैं (ध्रुवीय अभिगमन) एवं इनका स्थानान्तरण विसरण द्वारा एक कोशिका से दूसरी कोशिका में होता है।

ऑक्सिन के कार्यिकीय प्रभाव (Physiological effects of Auxins)

1. शीर्ष प्रभाविता या शिखाग्र प्रमुखता (Apical dominance)-

शीर्षस्थ कलिका की उपस्थिति में पार्श्व अथवा कक्षस्थ कलिकाओं की वृद्धि पूर्णत: अथवा आंशिक रूप से निरुद्ध रहती है। इस स्थिति को शीर्ष प्रमुखता (Apical dominance) कहते हैं। शीर्ष कलिका ऑक्सिन का संश्लेषण करती है जो कि नीचे की ओर स्थानान्तरित हो जाता है। इसके कारण पार्श्व कलिकाओं (lateral buds) की वृद्धि रुक जाती है। यदि शीर्षस्थ कलिका को काट दिया जाए तो पार्श्व एवं कक्षस्थ कलिकाएँ विकसित होने लगती हैं। इसके फलस्वरूप पादप झाड़ीनुमा (Shruby) हो जाता है। मेंहदी तथा चने में शीर्ष कलिकाओं को तोड़कर/काटकर पौधे को झाड़ीनुमा बनाया जाता है।

2. कोशिका दीर्धीकरण (Cell elongation)-

ऑक्सिन का प्रमुख कार्य प्ररोह शीर्ष (Shoot apex) में विभाजन के परिणामस्वरूप निर्मित कोशिकाओं का दीर्धीकरण (Elongation) करना है। प्ररोह में ऑक्सिन की अधिक सान्द्रता शीर्ष दीर्धीकरण को प्रेरित करती है। इसलिए प्ररोह शीर्ष धनात्मक प्रकाशानुवर्ती (Positive photoropic) एवं ऋणात्मक गुरुत्वानुवर्ती (Negative geotropic) होता है।

3. जड़ों का समारंभन (Root Initiation)-

ऑक्सिन जड़ों के निकलने को प्रेरित करता है। कुछ पौधे जैसे-गुलाब, बोगेनविलिया, नींबू, सन्तरा आदि में तना या कलम लगाकर नया पौधा तैयार किया जाता है। यदि कलम के निचले सिरे को ऑक्सिन के विलयन में डुबाकर लगाया जाये तो कटे हुए भाग पर जड़े शीघ्रता से निकल आती हैं। इस कार्य के वृहद पैमाने पर सम्पादन के लिए IBA (इण्डोल ब्यूटाइरिक अम्ल) का प्रयोग किया जाता है।

4. अनिषेक फलन (Parthenocarpy)-

बिना निषेचन के अण्डाशय के फल में परिवर्तित होने की क्रिया अनिषेक फलन (Parthenocarpy) कहलाती है तथा प्राप्त फल अनिषेक फल (Parthenocarpic fruits) कहलाते हैं। ये फल बीज रहित होते हैं। जैसे—सन्तरा, नींबू, तरबूज, बैंगन तथा अंगूर आदि। यदि कलिका अवस्था में पुष्पों से पुंकेसरों को निकालकर वर्तिकाग्र पर ऑक्सिन को छिड़काव कर दिया जाए तब बीज रहित अनिषेक फलों का उत्पादन होता है।

5. फसली पौधों का गिरने से बचाव (Prevention of lodging)-

अनेक फसली पौधों (Crop plants) जैसे-गेहूँ (Wheat) में दुर्बलता के कारण तेज हवा के प्रभाव में पौधे जड़ के पास से मुड़कर गिर जाते हैं। छोटे पौधे के ऊपर ऑक्सिन का छिड़काव करने से पौधों का निचला भाग मजबूत हो जाता है तथा पौधों की हवा से गिरने की सम्भावना कम हो जाती है।

6. प्रसुप्तावस्था नियन्त्रण (Control of Dormancy)-

ऑक्सिन बीजों तथा कन्दों में प्रसुप्तावस्था (Dormancy) बनाए रखता है। ऑक्सिन बीजों के अंकुरण (Germination of seeds) तथा कलिकाओं के प्रस्फुटन को रोकते हैं जिससे इनका दीर्घावधि तक संग्रहण किया जा सकता है। NAA के छिड़काव द्वारा आलू के कन्दों को लगभग तीन वर्ष तक संग्रहीत किया जा सकता है।

7. पुष्पों की सघनता कम करना (Thinning of flowers)-

कुछ वृक्षों जैसे आम की कुछ किस्मों में अमुक वर्ष में अत्यधिक पुष्प बनते हैं। जिससे फलों की संख्या तो अधिक होती हैं परन्तु वे आकार में छोटे रह जाते हैं। ऑक्सिन जैसे-NAA का छिड़काव करके अनावश्यक पुष्पन को नियन्त्रित किया जा सकता है।

8. विलगन पर प्रभाव (Effect on abscission)-

परिपक्व होने से पूर्व ही पत्तियों, फूलों का गिर जाना विलगन कहलाता है। ऐसा ऑक्सिन की कमी के कारण विलगने परत के निर्माण हो जाने से होता है। ऑक्सिन विलगन परत के निर्माण को अवरुद्ध करते हैं। NAA, 2-4 D, IBA आदि के छिड़काव द्वारा इन्हें अपरिपक्व अवस्था में झड़ने से रोका जा सकता है।

9. खरपतवारों का उन्मूलन (Eradication of weeds)-

फसली पौधों के साथ अनावश्यक रूप से उगने वाले पौधे खरपतवार (Weeds) कहलाते हैं। ये पौधे जल, खनिज इत्यादि पदार्थों के लिए फसली पौधों से प्रतियोगिता करते हैं जिससे फसल की वृद्धि अच्छी नहीं होती है। ऑक्सिन के प्रयोग से इन अनावश्यक पौधों को नष्ट किया जा सकता है। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार को 2-1D (2-4 Dichloro phenoxy acetic acid) तथा 2-4-5 T (2-4-5- Trichloro phenoxy acetic acid) से जबकि घास खरपतवारों को डेलापेन (2 : 3332 dichloro propionic acid) नामक संश्लिष्ट ऑक्सिनों से नष्ट किया जा सकता

10. पर्वों का लघुकरण (Shortening of internodes)–

नाशपती, सेब आदि में लघुशाखाओं पर ही फलों का निर्माण होता है। इन पौधों से NAA के छिड़काव द्वारा दीर्घशाखाओं के पर्वो को लघु करके लघुशाखाओं की संख्या में वृद्धि की जा सकती है।

11. ऊतक संवर्धन (Tissue cullture)-

ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा ऊतक एवं अंगों का कृत्रिम संवर्धन व्यापक रूप से किया जाता है। इस तकनीक में ऑक्सिन मूल निर्माण एवं कैलस (Callus) विभेदने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।

प्रश्न 3. बैकने रोग क्या होता है ?

उत्तर: बैकने रोग (Bakanae disease) धान के पौधों में पाया जाता है।

इस रोग में धान के कुछ पौधे असामान्य रूप से लम्बे तथा पतले हो जाते हैं तथा इनमें पुष्पन नहीं होता हैं और ये फल तथा बीज उत्पन्न करने में असमर्थ हैं। अतः इन्हें बेवकूफ नवोभिद् रोग (Foolish seeding disease) भी कहते हैं। यह रोग एक कवक जिबरेला फ्यूजीकुराई (Gibberella fugikuroi) नामक केवक द्वारा उत्पन्न होता है। यह कवक एक हार्मोन का निर्माण करता है, जिसके कारण यह रोग होता है।

प्रश्न 4. शीर्ष प्रभाविता से आप क्या समझते हैं ?

उत्तर: शीर्ष प्रभाविता या शिखाग्र प्रमुखता (Apical dominance)- शीर्षस्थ कलिका की उपस्थिति से पार्श्व अथवा कक्षस्थ कलिकाओं की वृद्धि पूर्णतः अथवा आंशिक रूप से निरुद्ध रहती है। इस स्थिति को शीर्ष प्रभाविता कहते हैं। शीर्ष कलिका द्वारा ऑक्सिन का संश्लेषण होता है जो नीचे की ओर स्थानान्तरित हो जाता है। इसके कारण पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि रुक जाती है। यदि शीर्षस्थ कलिका को काट दिया जाये तो पाश्र्व एवं कक्षस्थ कलिकाएँ विकसित होने लगती हैं। जिससे पादप झाड़ीनुमा हो जाता है। मेंहदी व चने में शीर्ष कलिकाओं को तोड़ा जाता है, जिसमें शाखन अच्छा हो जाता है।

प्रश्न 5. वोल्टिग प्रभाव क्या है ?

उत्तर: जिब्बरेलिन पौधों में पर्व दीर्घन द्वारा पौधे की लम्बाई में वृद्धि को प्रेरित करता है। यह पत्तियों के आकार में वृद्धि को भी प्रेरित करता है। रोजेट स्वभाव वाले द्विवर्षी पादपों में यह दीर्घित पर्णरहित पर्व के निर्माण को प्रेरित करता है। इस दीर्घित पर्णरहित पर्व को बोल्ट (Bolt) तथा इस क्रिया को बोल्टकरण (Bolting) कहते हैं। जिब्बरेलिन उपचार द्वारा आनुवंशिक रूप से बौने पौधों को भी लम्बा किया जा सकता है। प्राकृतिक रूप से रोजेट स्वभाव का लम्बे, दीर्घित रूप में परिवर्तन बोल्टकरण कहलाता है।

प्रश्न 6. अंकुरण के अन्त में नवोद्भिद् के शुष्क भार में कमी क्यों आ जाती है ?

उत्तर: अंकुरण के समय बोजों में सचित भोजन का प्रयोग उपापचयी क्रियाओं में किया जाता है इसलिए अंकुरण के अन्त में नवोभिद् (Seed ling) के शुष्क भार में कमी आ जाती है। इसके पश्चात पत्तियाँ विकसित हो जाने पर प्रकाश संश्लेषण क्रिया होती है तथा पौधे के शुष्क भार में वृद्धि होती है।

प्रश्न 7. मेहन्दी की झाड़ियों के शीर्षभाग की माली कटिंग क्यों करता रहता है ?

उत्तर: शीर्षस्थ कलिकाओं की उपस्थिति में पार्श्व अथवा कक्षस्थ कलिकाओं की वृद्धि रुक जाती है। इसे शीर्ष प्रमुखता (Apical dominance) कहते हैं। शीर्षस्थ कलिकाओं के काट देने से कक्षस्थ कलिकाओं की वृद्धि होने लगती है तथा पौधा झाड़ीनुमा हो जाता है। इसलिए मेहन्दी की झाड़ियों के शीर्ष भाग की माली कटिंग करता रहती है।

प्रश्न 8. फाइटोक्रोम क्या है एवं इसका क्या महत्त्व है ?

उत्तर: फाइटोक्रोम (Phytochrome) : फाइटोक्रोम, कुछ शैवालों को छोड़कर सभी हरे पौधों जैसे–हरी शैवाल, लाल शैवाल, ब्रायोफाइटा, टेरिडोफाइटा, अनावृतबीजी तथा अनावृतबीजी पौधों में पाए जाने वाले वर्णक (Pigments) होते हैं। ये प्रोटीन युक्त क्रोमेटोफोर (Chromatoptioes) होते हैं। ये विभिन्न प्रकार की प्रकाश तरंगदैर्यों को अवशोषित करते हैं।

प्रश्न 9. एब्सिसिक अम्ल को तनाव हार्मोन क्यों कहते हैं ?

उत्तर: वृद्धि अवरोधक (Growth Inhibitors)

वे हॉर्मोन या पदार्थ जो पादपों की वृद्धि दर को घटाते हैं वृद्धि अवरोधक (Growth intibitors) कहलाते हैं। ये पदार्थ वृद्धि के नियन्त्रण तथा सन्तुलन के लिए आवश्यक होते हैं। इस वर्ग को प्रमुख हॉर्मोन एब्सिसिक अम्ल है।

एब्सिसिक अम्ल (Abscisic Acid)

एब्सिसिक अम्ल पौधे में प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला प्रमुख वृद्धि अवरोधक हॉर्मोन है। यह पादप को प्रतिकूल वातावरणीय परिस्थितियों का सामना करने में सहायता प्रदान करता है। अतः इसे तनाव हार्मोन (Stress hormone) कहते हैं।

वेयरिंग (Wareing, 1963) ने एसर (Acer) नामक पादप की पत्तियों से एक वृद्धिरोधक पदार्थ पृथक किया एवं इस पदार्थ का नाम डोर्मिन (Dormin) रखा। एडिकोट एवं सहयोगियों (Addicottet at. al, 1963) ने कपास की पुष्प कलिकाओं से एक पदार्थ निकाला जिसका नाम उन्होंने एब्सिसिन (Abscisin) रखा। बाद में यह सिद्ध हुआ कि डोर्मिन व एब्सिसिन एक ही पदार्थ हैं और उनका नाम एब्सिसिक अम्ल (ABA) रखा गया।

एब्सिसिक अम्ल का रासायनिक सूत्र $C_{15}H_{20}O_4$ है। यह पाँच कार्बन से निर्मित तीन आइसोप्रीन (Isoprene) इकाइयों का बना होता है। इसमें एकल कार्बोक्सिल (-COOH) समूह उपस्थित होता है। ABA का अधिकांश संश्लेषण हरितलवक में पानी की कमी आने पर कैरोटिनॉइड के अपघटन से होता है।

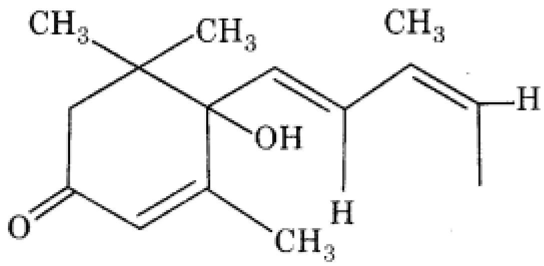

चित्र 13.10 एब्सिसिक अम्ल

एब्सिसिक अम्ल के कोशिकीय प्रभाव (Physiological effect of Abscisic Acid)

1. पत्तियों का विगलन (Abscission of leaves)-ABA के घोल की पत्तियों पर छिड़कने से उनका शीघ्र विलगन हो जाता है।
2. कलियों तथा बीजों की प्रसुप्तता (Dormancy of buds and seeds)-ABA कलियों एवं बीजों की प्रसुप्तता को प्रेरित करता है। जिससे कलियों की वृद्धि एवं अंकुरण हो जाता है।
3. वाष्पोत्सर्जन रोधी (Antitranspribrant)-ABA की अल्पमात्रा पत्तियों के रन्ध्रों को आंशिक रूप से बन्द कर देती है, जिससे वाष्पोत्सर्जन की दर कम हो जाती है।
4. वृद्धि का संदमन (Inhibition of growth)-ABA कोशिका विभाजन एवं कोशिका परिवर्धन दोनों को अवरुद्ध कर देता है।
5. जीर्णता (Senescence)-ABA अनेक पादपों में जीर्णता को प्रेरित करता है। जिससे पर्णहरित, प्रोटीन एवं RNA का तीव्र ह्रास होता है।
6. तनाव हार्मोन के रूप में (As a stress hormonce)-ABA को निर्माण पत्तियों में जलाभाव की स्थितियों में बढ़ जाता है जिससे रंध्र का बन्द होना प्रेरित होता है। जो 56% वाष्पोत्सर्जन एवं 14% प्रकाश संश्लेषण को कम कर देता है।

यह भी जानें

- पौधों की वृद्धि मापन में प्राय: दो प्रकार के ऑक्सेनोमीटर प्रयुक्त किए जाते हैं-आर्कवृद्धि मापी तथा फेफर्स वृद्धि मापी।
- लाल रंग का प्रकाश वृद्धि के लिए सबसे अनुकूल होता है जबकि नीले रंग के प्रकाश में पौधे अपेक्षाकृत छोटे होते हैं।
- ऑक्सिन ग्रीक भाषा के एक शब्द 'auxein' से लिया गया है जिसका अर्थ है-"to grow"।
- मानव मूत्र से तीसरा ऑक्सिन इण्डोल-3 एसीटिक अम्ल प्राप्त किया गया। ऑक्सिन-a मानव मूत्र के क्रिस्टलित पदार्थ से तथा ऑक्सिन-b कार्प जर्म ऑयल से प्राप्त किया। ये क्रमश: प्रथम व द्वितीय ऑक्सिन हैं।
- जिबरेला फ्यूजीकुराई कवक, फ्यूजेरियम मोनिलीफार्मी कवक का ही दूसरा नाम है।
- पादप वृद्धि को सेकण्ड्स में अंकित करने वाला यन्त्र क्रेस्कोग्राफ कहलाता है।

प्रश्न 10. संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए।

(1) प्रसुप्ति
(2) उत्तरपक्कन काल
(3) दीप्तिकालिता।

उत्तर: (1) प्रसुप्ति (Dormancy)

प्रसुप्तावस्थी यी प्रसुप्ति (Dormant stage or Dormancy)

पादपों में बीजों का पूर्ण विकास होने के पश्चात बीजों की वृद्धि रुक । जाती है। अनुकूल वातावरणीय परिस्थितियों में कुछ पौधों के बीज अपने निर्माण के तत्काल पश्चात् अंकुरित हो जाते हैं। परन्तु कुछ अन्य पौधों में अनुकूल वातावरणीय परिस्थितियाँ उपलब्ध होने पर भी अंकुरित नहीं होते हैं। अर्थात शरीर क्रियात्मक रूप से (Physiologically) निष्क्रिय रहते हैं। बीजों की यह अवस्था प्रसुप्तावस्था (Dormant stage) कहलाती है तथा इस परिघटना को प्रसुप्ति (Dormancy) कहते हैं। प्रसुप्ति के कारण बीजों का अंकुरण अस्थायी रूप से कुछ समय के लिए निलम्बित रहता है। इसके कारण बीज दीर्घावधि तक जीवनक्षम (Viable) बने रहते हैं।

निलम्बन अवधि मरुस्थलीय पादपों जैसे—बबूल (Acacia) तथा घास (Grass) में 5 से 10 वर्ष तक होती है। आर्कटिक बुण्ड्रा में लुपीन (Lupin) के बीजों में प्रसुप्तिता 1000 वर्ष आंकी गई है। सामान्यत: अधिकांश फसली पादपों के बीज 2 से 5 वर्ष तक प्रसुप्तावस्था में रहते हैं। कुछ पादपों जैसे-राइजोफोरा, मटर इत्यादि के बीजों में प्रसुप्तावस्था अनुपस्थित होती हैं। बीजों में प्रसुप्ति अन्तर्जात अर्थात बहिर्जात कारकों के प्रभाव से होती है। अन्तजति कारक बीज की संरचना (Structure) तथा परिवर्धन (Development) से सम्बन्धित होते हैं। जबकि बहिर्जात कारक वातावरण (Environment) एवं जलवायु (Climate) से सम्बन्धित होते ।

प्राथमिक तथा द्वितीयक प्रसुप्ति (Primary and Secondary Dormancy)

जब बीज परिपक्व होने के तुरन्त पश्चात अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त होने पर भी अपने आंतरिक अथवा संरचनात्मक एवं क्रियात्मक कारणों से अंकुरित नहीं होते हैं तो इसे प्राथमिक प्रसुप्ति (Primary dormancy) कहते हैं, जबकि कुछ पादपों के बीजों में परिपक्कन के पश्चात संग्रह के दौरान होने वाले परिवर्तनों से प्रसुप्ति होती है, उसे द्वितीयक प्रसुप्ति (Secondary dormancy) कहते हैं। प्रसूप्ति को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting dormancy) बीजों में प्रसुप्ति अनेक अन्तर्जात एवं बहिर्जात कारकों से प्रभावित होती है जो निम्नानुसार हैं-

(1) कठोर बीजावरण (Hard seed coat)-अनेक पौधों के बीजों में बीजावरण अत्यन्त कठोर होता है। यह बीजावरण अंकुरण के लिए आवश्यक जल (उदाहरण– चना, मटर) एवं ऑक्सिन (उदाहरणजैन्थियम) के प्रति अपारगम्य (Impermeable) होता है। जिससे बीज आसानी से अंकुरित नहीं हो पाते हैं। कई बार यह यांत्रिक प्रतिरोध उत्पन्न कर भ्रूण को विकसित होने नहीं देता है। उदाहरण एमेरेन्थस।।

(2) भ्रूण की अपरिपक्वता (Immaturity of embryo)-कुछ पौधों में भ्रूण के परिपक्व होने से पूर्व ही बीजों का प्रकीर्णन (Dispersal) हो जाता है। अतः इन बीजों का अंकुरण तब तक सम्भव नहीं होता है जब तक कि भ्रूण का परिपक्वन पूरा न हो जाए। उदाहरण—गिंगो बाइलोबा (Ginkgo biloba), नीटम निमोन (Gnetum gnemone) |

(3) उत्तरपक्वन काल की आवश्यकता (Requirment of after ripening period)-कुछ पौधों के बीज परिपक्व होने के तुरन्त बाद अंकुरित नहीं हो पाते हैं। अपितु कुछ समय के विश्राम काल के पश्चात ही अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होते हैं। विश्रामकाल की अवधि में ये बीज अंकुरण की क्षमता अर्जित कर लेते हैं। यह विश्राम काल उत्तरपक्वन काल (After ripening period) कहलाता है। विभिन्न जातियों में उत्तरपक्वन काल की अवधि कुछ सप्ताह से कुछ महीनों की हो सकती है। उदाहरणार्थ-गेहूँ, जौ, जई आदि।

(4) विशिष्ट तापक्रम एवं प्रकाश की आवश्यकता (Requirement of specific temperature and light)-बीजों को अंकुरण से पूर्व बीज उपचार (Seed treatment) की आवश्यकता होती है। ये बीज जब तक विशिष्ट शीत तापक्रम द्वारा उपचारित नहीं होते अंकुरित नहीं हो पाते हैं। शीत ऋतु में ये बीज प्राकृतिक रूप से उपचारित हो जाते हैं। शीत उपचार के लिए अनुकूलतम ताप 0°C से 5°C होता है। उदाहरणार्थ-चैरी, ओक आदि। सामान्यतः कुछ बीजों का अंकुरण प्रकाश की अवधि, उसकी गुणवत्ता तथा मात्रा के प्रति अति संवेदनशील होता है। ये बीज फोटोब्लास्टिक (Photoblastic) कहलाते हैं। उदाहरणार्थ-तम्बाकू तेथी कैप्सेली आदि।

(5) अंकुरण निरोधकों की उपस्थिति (Presence of germination inhibitors)-गूदेदार फलों के गूदे में उपस्थित अनेक पदार्थ बीजों के अंकुरण को रोकने में सक्षम होते हैं, इन्हें अंकुरण निरोधक (Germination inhibitors) कहते हैं। इनमें एब्सिसिक अम्ल (ABA) कौमेरिन (Coumarin), पैरा ऐस्कॉर्बिक अम्ल (Para ascorbic acid), फिनोलिक अम्ल (Phenolic acid) आदि महत्त्वपूर्ण पदार्थ हैं। बीजों के मृदा में पड़े रहने से ये पदार्थ धीरे-धीरे निक्षालित (Leached) हो जाते हैं। तत्पश्चात् बीजों का अंकुरण होता है। इन पदार्थों के निरोधी प्रभाव को जिब्बरेलिन से दूर किया जा सकता है।

बीज प्रसुप्ति दूर करने की विधियाँ (Methods of breaking seed dormancy)

बीजों की प्रसुप्ति भंग करने के लिए विभिन्न प्रकार की विधियाँ अपनायी जाती हैं जो पादप जाति एवं प्रसुप्ति कारक पर निर्भर करती हैं। प्रसुप्ति भंग करने की कुछ सामान्य विधियाँ निम्नानुसार हैं|

(1) खुरचना (Scarification)-इस विधि में कठोर बीजावरण को तोड़कर अथवा खुरचकर कृत्रिम रूप से कमजोर बना दिया जाता है। कई बार बीजों को तनु अम्ल (H_2SO_4), गरम जल अथवा वसा विलायकों में भिगोकर मुलायम बनाया जाता है।

(2) शीतन उपचार (Chilling treatment)-ऐसे बीज जिनकी प्रसुप्ति भंग करने के लिए प्राकृतिक शीत उद्भासन (Expoure) की आवश्यकता होती है, कृत्रिम रूप से शीत उपचारित कर इनकी प्रसुप्ति भंग की जा सकती है।

(3) एकान्तरिक तापक्रमों द्वारा उद्भासन (Exposure to alternate temperature)-कुछ पादप बीजों की प्रसुप्ति को क्रमशः । उच्च व निम्न तापक्रम से उद्भासित करके समाप्त किया जा सकता है।

(4) प्रकाश (Light)-कुछ धनात्मक प्रकाशस्फटी (Positive photoblastic) बीजों को लाल प्रकाश से उद्भासित करके इनकी अंकुरण क्षमता को बढ़ाया जाता है।

(5) दाब (Pressure)-कुछ प्रसुप्त बीजों को 18°C से 20°C तापक्रम पर 2000 वायुमण्डलीय दाब पर रखने से इनकी अंकुरण क्षमता बढ़ जाती है क्योंकि इससे बीजावरण (Seed coat) कमजोर हो जाते हैं। तथा इसकी पारगम्यता (Permeability) बढ़ जाती है।

(6) वृद्धि नियन्त्रकों का उपयोग (Use of growth regulators)-जिन बीजों की प्रसुप्ति का कारण शीतन उपचार की आवश्यकता, उत्तरपक्वनकाल, निरोधकों की उपस्थिति अथवा विशिष्ट प्रकाश की आवश्यकता होती है, उनकी प्रसुप्ति को वृद्धि नियंत्रकों के अनुप्रयोग से भंग किया जा सकता है। इस श्रेणी में जिब्बरेलिन, इथाइलिन, क्लोरोहाइड्रिन तथा थायोयूरिया प्रमुख हैं।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 1. निम्न पर टिप्पणी लिखिए

(अ) वृद्धि की प्रावस्थाएँ
(ब) वृद्धि गतिकी।

उत्तर: (अ) वृद्धि की प्रावस्थाएँ (Phases of growth)

वृद्धि की प्रावस्थाएँ (Phase of Growth)

ऊपर बताए गए सभी विभज्योतकों (Meristems) में विभाजन क्रिया, सूत्री विभाजन (Mitosis) प्रकार की होती है जिसके द्वारा एक कोशिका (Cell) से उसी प्रकार की दो कोशिकाओं की उत्पत्ति होती है। इस प्रकार निर्मित कोशिकाओं में से कुछ कोशिकाएँ अपनी विभाजन क्षमता को बनाए। रखती हैं और बार-बार विभाजनों द्वारा नई कोशिकाओं को जन्म देती रहती हैं तथा कुछ कोशिकाओं में विभाजन क्षमता समाप्त हो जाती है। ये कोशिकाएँ पहले विवर्धन (Elongation) करती हैं और अन्त में विभिन्न गुणों के अनुसार विभेदित (Differentiate) तथा व्यवस्थित होकर परिपक्व ऊतकों एवं अंगों का स्वरूप बनाती हैं। इस प्रकार यदि पौधे के किसी अंग की वृद्धि की विवेचना की जाए तो उसमें तीन प्रमुख अवस्थाएँ दिखाई देती हैं-

1. कोशिका विभाजन प्रावस्था (Cell division phase)
2. कोशिका विवर्धन प्रावस्था (Cell elongation phase)
3. परिपक्वता प्रावस्था (Maturation phase)

1. कोशिका विभाजन प्रावस्था (Cell division phase)-यह अवस्था तने तथा मूल के शीर्षस्थ विभज्योतकों (apical meristems) में सीमित रहती है। इस भाग की कोशिकाएँ निरन्तर विभाजन करती

रहती हैं। तथा संख्या में बढ़ती रहती हैं। इन कोशिकाओं में पर्याप्त जीवद्रव्य, बड़ा केन्द्रक तथा पतली सेलुलोज भित्ति (Cellulosic wall) होती है। इन कोशिकाओं में रिक्तिकाएँ (Vacuoles) तथा कोशिकाओं के बीच रिक्त स्थान (Spaces) नहीं पाए जाते हैं।

2. कोशिका विवर्धन प्रावस्था (Cell elongation phase)-यह प्रावस्था विभाजन अवस्था वाली कोशिकाओं के ठीक नीचे स्थित होती है। इस प्रावस्था में कोशिकाओं के अन्दर अनेक छोटी-छोटी रिक्तिकाएँ बन जाती हैं। इसमें जल तथा जल में घुलित पदार्थ एकत्र होते रहते हैं और अन्त में सभी रिक्तिकाएँ आपस में जुड़कर एक बड़ी रिक्तिका (Vacuole) बनाती है। यह बड़ी रिक्तिका कोशिका के केन्द्र में इस प्रकार स्थित होती है कि केन्द्रक एवं कोशाद्रव्य (Cytoplasm) कोशिका भित्ति की आन्तरिक सतह पर एक पतली परत के रूप में सटा रहता है। जिसे कोशिका दृति (Primordial utricle) कहते हैं।

3. परिपक्वन प्रावस्था (Maturation phase)-इसे कोशिका । विभेदन प्रावस्था भी कहते हैं। यह प्रावस्था विवर्धन प्रावस्था के ठीक नीचे | स्थित होती है। यहाँ पर कोशिका एक निश्चित आकार के गुणधर्म को पाकर स्थाई ऊतकों (Permanent tissues) में परिवर्तित हो जाती है तथा कोशिका भित्ति की मोटाई बढ़ती है। कभी-कभी यह मोटाई एक समान नहीं होती जैसे कि जाइलम के ट्रेकीड (Trachied) की भित्तियों में विभिन्न प्रकार के स्थूलन (Thickning) हो जाते हैं।

(ब) वृद्धि गतिकी (Growth Kinetics)

वृद्धि बलगतिकी (Growth kinetics)

एक निश्चित समय में किसी अंग या पादप विशेष के आयतन या भार में होने वाली वृद्धि को वृद्धि दर (Growth rate) कहते हैं। वृद्धि दर को ज्यामितीय (रेखागणितीय) तथा अंकगणितीय रूप में व्यक्त किया जा सकता है। ज्यामितीय वृद्धि के अंतर्गत एक कोशिका से निर्मित दोनों पुत्री कोशिकाएँ पुनः विभाजित होती हैं। इससे प्रत्येक विभाजन के पश्चात् बनने वाली कोशिकाओं की संख्या दुगनी होती जाती है। जैसे 1→ 2 → 4→ 8→ 16 आदि। ज्यामितीय वृद्धि युग्मनज (Zygote) के प्रारम्भिक विभाजनों के दौरान देखी जा सकती है। अंकगतिणतीय वृद्धि के दौरान प्रत्येक विभाजन से बनने वाली दो कोशिकाओं में से एक स्थायी कोशिका में परिवर्तित हो जाती है तथा केवल एक ही आगे विभाजन करती है। इस प्रकार प्रत्येक विभाजन से केवल एक नई कोशिका की बढ़ोत्तरी होती है। जैसे 1→1→1→1→1 आदि। ऐसा विभाजन प्ररोह व मूल शीर्ष (Shoot and root apex) पर होता है।

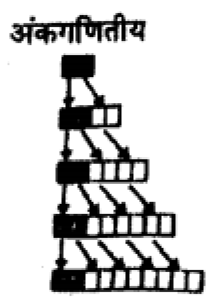

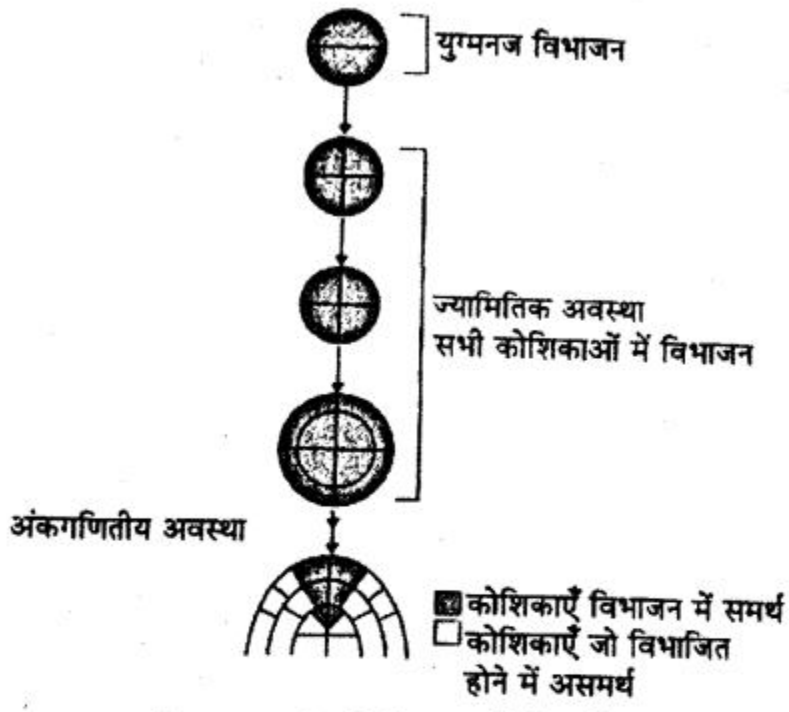

चित्र 13.2 अंकगणितीय व ज्यामितीय वृद्धि

वृद्धि दर को प्रभावित करने वाले कारकों को समान रखते हुए यदि हम कोशिका, पादप अंग या सम्पूर्ण पादप की वृद्धि का मापन करें तब हम पाते हैं कि सम्पूर्ण पादप में वृद्धि दर (Growth rate) समान नहीं होती है। यदि वृद्धि दर तथा समय के मध्य ग्राफ खींचा जाय तब एक S-आकृति या सिग्मोइड आकृति (s-shaped or sigmoid shape) ग्राफ प्राप्त होता है। इसे वृद्धि वक्र (Growth curve) कहते हैं।

एक सम्पूर्ण वृद्धि वक्र को चार भागों में विभक्त किया जा सकता है|

(1) मन्दवृद्धिकाल (Lag period)—यह वृद्धि की प्रारम्भिक अवस्था होती है जिसमें वृद्धि दर मन्द होती है। इस अवस्था में कोशिका में आन्तरिक परिवर्तन होते हैं एवं संचित खाद्य पदार्थों के उपयोग में आने से इसके शुष्क भार में कमी आती है। कोशिका विभाजन के फलस्वरूप नवीन कोशिकाओं का निर्माण होता है। जिससे आयतन में धीरे-धीरे वृद्धि होती है।

(2) अधिकतम वृद्धिकाल (Log period)—इस प्रावस्था में तीव्र गति से अधिकतम वृद्धि होती है जो कोशिकाओं के विवर्धन के कारण होती है।

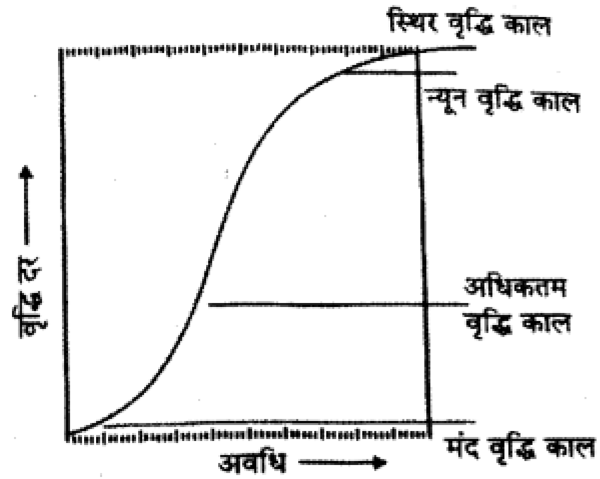

चित्र 13.3 सिग्मोइड वृद्धि चाप

(3) मंद वृद्धिकाल (Diminishing growth period)-इस अवस्था में वृद्धि दर पुनः मन्द हो जाती है। इस काल में कोशिकाओं का परिपक्वन होता है तथा उपापचयी क्रियाएँ भी धीमी पड़ने लगती हैं।।

(4) स्थिर वृद्धिकाल (Stationary period)-इस प्रावस्था में कोशिका के पूर्ण परिपक्वन हो जाने में वृद्धि लगभग स्थिर हो जाती है।

अधिकतम वृद्धिकाल जिसके दौरान अधिकतम वृद्धि होती है, उसको सैक (Sachs, 1882) ने समग्र वृद्धिकाल (Grand period og growth) कहा है।

प्रश्न 2. वृद्धि का मापन किस प्रकार किया जाता है ? वृद्धि को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।

उत्तर: वृद्धि मापन (Growth Measurement)

पादप में वृद्धि दर मापन उसके अंगों (पत्ती, फूल, फल) के आकार, क्षेत्रफल अथवा भार में वृद्धि के रूप में किया जा सकता है। पादप में वृद्धि मापन निम्नलिखित रूपों में किया जा सकता है-

(1) कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि द्वारा
(2) कोशिकाओं, ऊतकों एवं अंगों के आकार में वृद्धि द्वारा
(3) शुष्क भार में वृद्धि द्वारा
(4) रेखीय नाप द्वारा वृद्धि मापन की विभिन्न विधियाँ तथा प्रयुक्त उपकरण निम्न प्रकार हैं-

(1) सरल अथवा सीधी विधि (Simple or straight method)-यह वृद्धि मापन की सबसे सरलतम विधि है। इसमें पादप अंग की प्रारम्भिक लम्बाई को स्केल से माप लिया जाता है। इसके पश्चात निश्चित समयावधि के उपरान्त पुन: उसकी लम्बाई का मापन कर लिया जाता है। लम्बाई में पाई गई वृद्धि उस निश्चित समय में होने वाली वृद्धि को इंगित करती है।

(2) वृद्धिमापी द्वारा (By Auxanometer)-सामान्यतः पादप की वृद्धि को रेखीय वृद्धि द्वारा ही मापा जाता है। इसके लिए वृद्धिमापी यन्त्र (Auxanometer) प्रयुक्त किया जाता है। यहाँ एक सरल चाप वृद्धिमापी का वर्णन किया गया है।

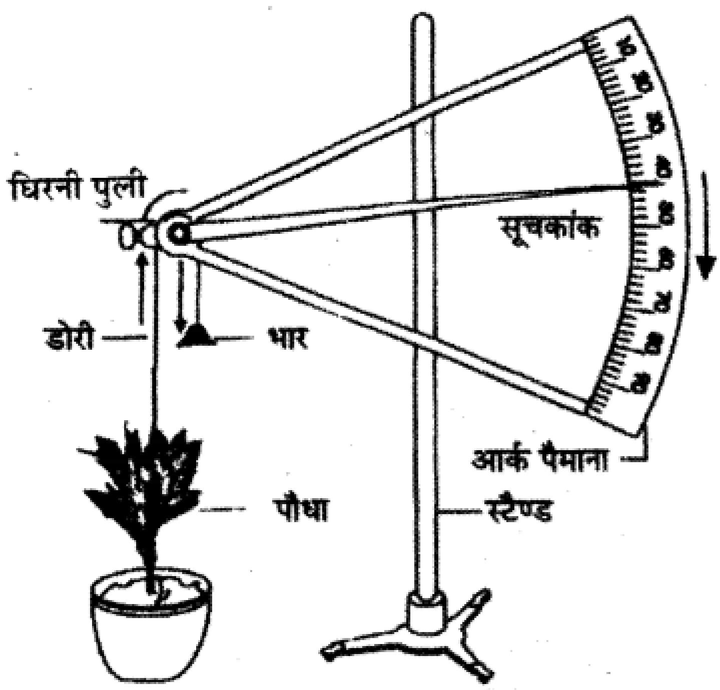

चित्र 13.4 आर्क (चाप) वृद्धिमापी

चाप वृद्धिमापी (Arc auxanometer)—इस वृद्धिमापी उपकरण के द्वारा पादप की लम्बाई में होने वाली वृद्धि को मापा जाता है।

इसमें एक ऊर्ध्व स्टैण्ड पर छोटी घिरनी (Pulley) लगी रहती है। घिरनी से एक सूचक संलग्न होता है जो स्केल पर चलता है। वृद्धि करने वाले पादप के तने के शीर्ष पर एक धागा बाँधकर उसे पुली के ऊपर ले जाकर दूसरे सिरे पर एक वजन बाँध दिया जाता है। पौधे का तना जब वृद्धि करता है तो धागे से बँधा हुआ भार धागे को नीचे की ओर खींचता है। जिसके परिणामस्वरूप घिरनी के घूमने से सूचक स्केल पर चलता है जो लम्बाई में वृद्धि को प्रदर्शित करता है। चाप सूचक (Arc indicator) द्वारा वृद्धि को आवर्धित रूप में देखा जा सकता है तथा इसका मान घिरनी के व्यास तथा सूचक की लम्बाई पर निर्भर करता है।

प्रश्न 3. ऑक्सिन क्या होता है ? पादप वृद्धि पर इसके कार्यिकीय प्रभावों की विवेचना कीजिए।

उत्तर: ऑक्सिन (Auxins)

ऑक्सिन शब्द की व्युत्पति ग्रीक शब्द Auxein से हुई है। जिसका | शाब्दिक अर्थ है "to grow" अर्थात् वृद्धि करना। ऑक्सिन ऐसा पादप हार्मोन समूह है जिसे सर्वप्रथम खोजा गया था तथा यह पौधों में प्ररोह की कोशिकाओं में दीर्धीकरण (Elongation) को प्रेरित करते हैं। तीन प्रकार के ऑक्सिन्स को सबसे पहले मानव मूत्र (Human urine) से पृथक् किया गया जिन्हें क्रमश: ऑक्सिन-a, ऑक्सिन–b तथा इण्डोल-3

एसिटिक अम्ल नाम दिये गए। ईण्डोल ऐसीटिक अम्ल व इसके समान गुण वाले सभी प्राकृतिक तथा कृत्रिम संश्लेषित पदार्थ ऑक्सिन (Auxins) कहलाते हैं।

ऑक्सिन की खोज (Discovery of Auxins)-जैव विकास सिद्धान्त के प्रवर्तक चार्ल्स डार्विन (Charls Darwin; 1890) प्रथम व्यक्ति थे जिन्हें पौधे के शीर्ष पर वृद्धिकारी पदार्थ का आभास हुआ था। चार्ल्स डार्विन एवं फ्रेन्सिस डार्विन ने केनेरी घास (Phalis canartensis) पर किये गये प्रयोगों का वर्णन अपनी पुस्तक 'द पॉवर ऑफ मूवमेन्ट इन प्लाण्ट्स' में किया। डार्विन के अनुसार प्रांकुरचोल (Coleoptile) को एक दिशा में प्रकाश देने पर यह प्रकाश की तरफ मुड़ता है। इन्होंने इस प्रयोग के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि प्रांकुरचोल (Coleoptile) को एक दिशिक प्रकाश देने पर कुछ पदार्थ जो शीर्ष पर बनते हैं नीचे की ओर स्थानान्तरित हो जाते हैं जिसके फलस्वरूप इस भाग में वक्रण उत्पन्न हो जाती है। डार्विन द्वारा किये गये प्रयोग को बाद में बॉयसन जेनसन तथा पाल (Boysen Jensen and Pall) ने आगे बढ़ाया।

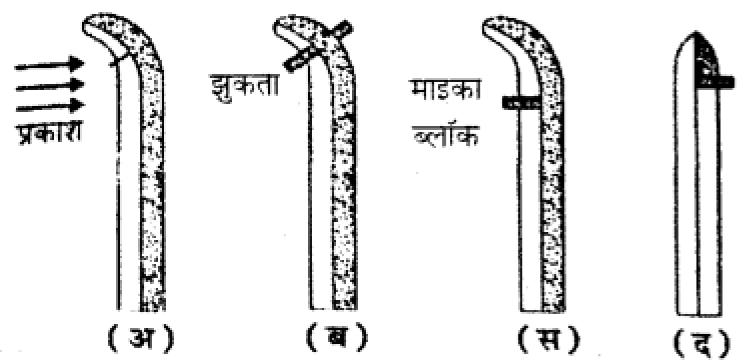

चित्र 13.5 बॉयसन-जैनसन के प्रयोग

बॉयसन जेनसन (Boysen Jensen 1910-13) ने जई (Avenu Sativa) के प्रांकुरचोल पर प्रयोग किया तथा बताया कि प्रांकुरचोल का शीर्ष काट देने पर यह प्रकाशानुवर्तन (Phototropism) अथवा वक्रण (Curving) प्रदर्शित नहीं करता है। यदि काटे हुए शीर्ष को पुनः स्थापित कर दिया जाये तो वक्रण अथवा प्रकाशानुवर्तन क्षमता पुन: स्थापित हो जाती है। शिरोच्छेदित शीर्ष व सुंठ (Stump) के मध्य जिलेटिन का टुकड़ा रखने पर भी वक्रण क्षमता बनी रहती है।

यदि प्रांकुरचोल को अप्रदीप्त सतह (Dark side) पर आधे भाग में अनुप्रस्थ चीरा (Horizontal slit) लगाकर उसमें अभ्रक की प्लेट (Micaplate) लगा दी जाती है तो प्रांकुरचोल प्रकाश की ओर नहीं मुड़ता है, परन्तु चीरा और अभ्रक र प्ले? प्रकाशित सतह (Illuminated side) पर लगाई जाए तो प्रांकुरचोला प्रकाश की ओर मुड़ जाता है। उपरोक्त प्रयोग के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकला कि प्रकाशानुवर्तन अथवा वक्रण के लिए उत्तरदायी पदार्थ या उद्दीपक अप्रदीप्त पार्श्व से नीचे की ओर स्थानान्तरित होता है।

पाल (Pall, 1919) ने भी इस सम्बन्ध में विस्तृत प्रयोग किये एवं सिद्ध किया कि शीर्षभाग में रसायन उपस्थित होते हैं जो वृद्धि प्रवर्तक होते हैं। इन्होंने यह भी बताया कि शीर्ष में उत्पन्न होने वाली पदार्थ जल में विलेयशील होता है।

ऑक्सिन की खोज का श्रेय एफ.डब्ल्यू वेन्ट (F.w.went, 1926-28) को दिया जाता है। उसने वृद्धिकारी पदार्थ को पृथक (Isolate) करने में सफलता प्राप्त की। उन्होंने जई के प्रांकुरचोल का शीर्ष काटकर उसे

अगार (Agar) के घनाकार टुकड़े के ऊपर रखा। इसके पश्चात् शीर्ष को आगार से अलग करके अगार को छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँट दिया तथा छोटे-छोटे टुकड़ों को प्रांकुरचोल (Coledoptile) के ठूठ पर स्थापित करने पर पाया कि वृद्धि उसी प्रकार पुनः स्थापित हो जाती है। इसके विपरीत साधारण अगार खण्ड को प्रांकुरचोल (Coeloptile) के ढूंठ पर रखने पर वृद्धि नहीं होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कुछ पदार्थ प्रांकुरचोल (Coledoptile) से नीचे की ओर अगार खण्ड में स्थानान्तरित होते हैं जो वृद्धि के लिए उत्तरदायी हैं। अपने प्रयोगों के आधार पर वेन्ट ने पाया कि प्रांकुरचोल (Coledoptile) को एक ओर से प्रकाशित किये जाने पर प्रदीप्त क्षेत्र में ऑक्सिन की मात्रा कम होती है। उन्होंने अपने दूसरे प्रयोगों में जई के शीर्ष को अगार के दो टुकड़ों जिनके बीच में अभ्रक की पतली प्लेट लगी थी. इस प्रकार रखा जिससे शीर्ष आधा-आधा दोनों टुकड़ों पर रहे।

एक पाश्र्व से प्रकाश डालने पर हार्मोन का 65% भाग अप्रकाशित दिशा के टुकड़े में एकत्रित होता है।

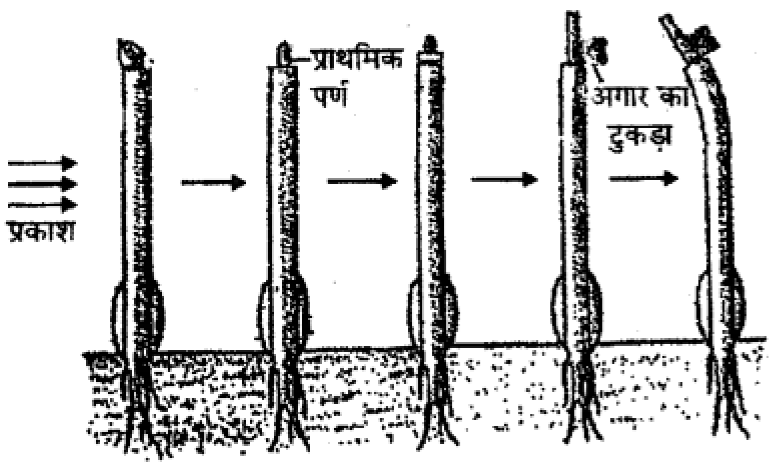

चित्र 13.6 वैन्ट का प्रयोग

अप्रकाशित भाग में हार्मोन की मात्रा अधिक होने के कारण इस भाग की कोशिकाओं का अधिक विस्तारण हो जाता है और प्ररोह प्रकाश की ओर मुड़ जाता है। | इस प्रकार कुछ दूसरे वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया कि प्रांकुरचोल अथवा मूल शीर्ष को क्षैतिज स्थिति में रखने पर हार्मोन का विस्थापन तथा प्रवाह गुरुत्वाकर्षण के कारण नीचे की ओर हो जाता है। नीचे की कोशिकाओं में ऑक्सिन की अधिक सान्द्रता प्ररोह शीर्ष के नीचे की कोशिकाओं में वृद्धि के लिए प्रेरित करती है एवं वह ऊपर की तरफ मुड़ जाता है। परन्तु मूल शीर्ष में ऑक्सिन, वृद्धि को संदमित (Retard) करता हैं। अतः नीचे की कोशिकाओं में कम वृद्धि होने से वह नीचे की ओर मुड़ जाता है।

ऑक्सिन की परिभाषा (Definition of Auxins)-वे कार्बनिक पदार्थ जो 0.01 मोलर से कम सान्द्रता में प्ररोह के विवर्धन को अभिवृद्धित करते हैं, ऑक्सिन (Auxins) कहलाते हैं।

ऑक्सिन की रासायनिक प्रकृति (Chemical nature of auxins)

कोगल (Kogal, 1931) ने उन पदार्थों को जो जई के प्रांकुरचोल (Coleoptile of oat) में वक्रता प्रेरित करने में समर्थ है को ऑक्सिन (Auxins) नाम दिया। कोगल तथा हैगन-स्मिट (Kogll and Haagensmit, 1931) ने मानव मूत्र (Human urine) से ऑक्सिन के समान पदार्थ पृथक किया। इसे इन्होंने ऑक्सिन-A

(Auxina-A) नाम दिया जिसका आण्विक सूत्र $C_{18}H_{32}O_5$ होता है। ऑक्सिन को दो वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है।

1. प्राकृतिक ऑक्सिन (Natural Auxins)
2. संश्लेषित ऑक्सिन (Synthetic Auxins)

1. प्राकृतिक ऑक्सिन (Natural Auxins)

कोगल एवं साथियों ने पुनः मानव मूत्र से ही एक अन्य पदार्थ पृथक किया जिसे हेटरोऑक्सिन (Heteroauxin) नाम दिया। इसका अणु सूत्र $C_{10}H_9O_2N$ है तथा इसे इण्डोल-3-ऐसीटिक अम्ल (Indole-3acetic acid or IAA) कहते हैं। यह पौधे में पाया जाने वाला प्राकृतिक ऑक्सिन (Nautral Auxin) है। अन्य प्राकृतिक ऑक्सिन IAA के व्युत्पन्न के रूप में पाये जाते हैं। प्राकृतिक ऑक्सिन शीर्ष विभज्योतक में निर्मित होते हैं एवं इसका संश्लेषण ट्रिप्टोफन नामक अमीनो अम्ल से होता है। इसके संश्लेषण के लिए Zn अनिवार्य होता है।
प्राकृतिक ऑक्सिन

(i) इण्डोल-3-ऐसीटिक अम्ल (IAA)

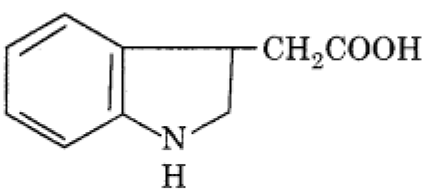

संश्लिष्ट ऑक्सिन

(ii) इण्डोल-3- ब्यूटायरिक अम्ल (IBA)

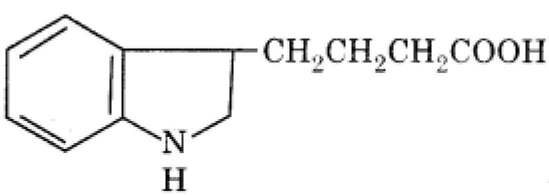

(iii) नेफ्थेलीन ऐसीटिक अम्ल (NAA)

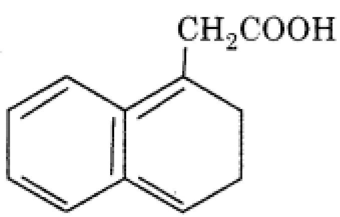

(iv) 2, 4- डाई क्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2, 4-डी)

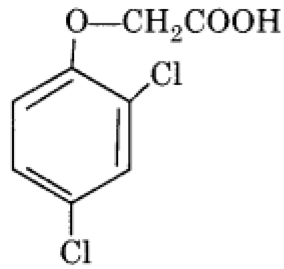

(v) 2, 4, 5- ट्राई क्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2, 4, 5-टी)

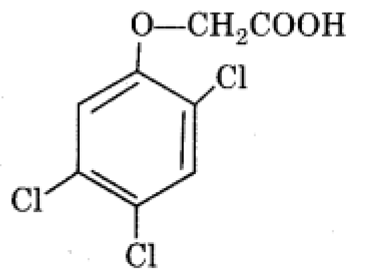

चित्र 13.7 प्रमुख ऑक्सिन्स

2. संश्लिष्ट ऑक्सिन (Synthetic Auxins)

कुछ संश्लिष्ट रासायनिक यौगिक भी ऑक्सिन के समान कार्य करते हैं। इन्हें संश्लिष्ट ऑक्सिन कहते हैं, जैसे-नैप्थैलिन ऐसीटिक अम्ल (NAA), इन्डोल 3-ब्यूटाइरिक अम्ल (IBA), 2-4 डाइक्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2-4D), इन्डोल 3-प्रोपियोनिक अम्ल (IPA)। पादपों के सभी भागों में आक्सिन की कुछ मात्रा उपस्थित होती है। परन्तु वृद्धि अथवा परिवर्तन ऊतकों में इसकी सान्द्रता अधिकतम होती है। ये पादप शीर्ष से आधार की ओर गमन करते हैं (ध्रुवीय अभिगमन) एवं इनका स्थानान्तरण विसरण द्वारा एक कोशिका से दूसरी कोशिका में होता है।

ऑक्सिन के कार्यिकीय प्रभाव (Physiological effects of Auxins)

1. शीर्ष प्रभाविता या शिखाग्र प्रमुखता (Apical dominance)- शीर्षस्थ कलिका की उपस्थिति में पार्श्व अथवा कक्षस्थ कलिकाओं की वृद्धि पूर्णत: अथवा आंशिक रूप से निरुद्ध रहती है। इस स्थिति को शीर्ष प्रमुखता (Apical dominance) कहते हैं। शीर्ष कलिका ऑक्सिन का संश्लेषण करती है जो कि नीचे की ओर स्थानान्तरित हो जाता है। इसके कारण पार्श्व कलिकाओं (lateral buds) की वृद्धि रुक जाती है। यदि शीर्षस्थ कलिका को काट दिया जाए तो पार्श्व एवं कक्षस्थ कलिकाएँ विकसित होने लगती हैं। इसके फलस्वरूप पादप झाड़ीनुमा (Shruby) हो जाता है। मेंहदी तथा चने में शीर्ष कलिकाओं को तोड़कर/काटकर पौधे को झाड़ीनुमा बनाया जाता है।

2. कोशिका दीर्धीकरण (Cell elongation)-ऑक्सिन का प्रमुख कार्य प्ररोह शीर्ष (Shoot apex) में विभाजन के परिणामस्वरूप निर्मित कोशिकाओं का दीर्धीकरण (Elongation) करना है। प्ररोह में

ऑक्सिन की अधिक सान्द्रता शीर्ष दीर्धीकरण को प्रेरित करती है। इसलिए प्ररोह शीर्ष धनात्मक प्रकाशानुवर्ती (Positive photoropic) एवं ऋणात्मक गुरुत्वानुवर्ती (Negative geotropic) होता है।

3. जड़ों का समारंभन (Root Initiation)-ऑक्सिन जड़ों के निकलने को प्रेरित करता है। कुछ पौधे जैसे-गुलाब, बोगेनविलिया, नींबू, सन्तरा आदि में तना या कलम लगाकर नया पौधा तैयार किया जाता है। यदि कलम के निचले सिरे को ऑक्सिन के विलयन में डुबाकर लगाया जाये तो कटे हुए भाग पर जड़े शीघ्रता से निकल आती हैं। इस कार्य के वृहद पैमाने पर सम्पादन के लिए IBA (इण्डोल ब्यूटाइरिक अम्ल) का प्रयोग किया जाता है।

4. अनिषेक फलन (Parthenocarpy)-बिना निषेचन के अण्डाशय के फल में परिवर्तित होने की क्रिया अनिषेक फलन (Parthenocarpy) कहलाती है तथा प्राप्त फल अनिषेक फल (Parthenocarpic fruits) कहलाते हैं। ये फल बीज रहित होते हैं। जैसे—सन्तरा, नींबू, तरबूज, बैंगन तथा अंगूर आदि। यदि कलिका अवस्था में पुष्पों से पुंकेसरों को निकालकर वर्तिकाग्र पर ऑक्सिन को छिड़काव कर दिया जाए तब बीज रहित अनिषेक फलों का उत्पादन होता है।

5. फसली पौधों का गिरने से बचाव (Prevention of lodging)-अनेक फसली पौधों (Crop plants) जैसे-गेहूँ (Wheat) में दुर्बलता के कारण तेज हवा के प्रभाव में पौधे जड़ के पास से मुड़कर गिर जाते हैं। छोटे पौधे के ऊपर ऑक्सिन का छिड़काव करने से पौधों का निचला भाग मजबूत हो जाता है तथा पौधों की हवा से गिरने की सम्भावना कम हो जाती है।

6. प्रसुप्तावस्था नियन्त्रण (Control of Dormancy)-ऑक्सिन बीजों तथा कन्दों में प्रसुप्तावस्था (Dormancy) बनाए रखता है। ऑक्सिन बीजों के अंकुरण (Germination of seeds) तथा कलिकाओं के प्रस्फुटन को रोकते हैं जिससे इनका दीर्घावधि तक संग्रहण किया जा सकता है। NAA के छिड़काव द्वारा आलू के कन्दों को लगभग तीन वर्ष तक संग्रहीत किया जा सकता है।

7. पुष्पों की सघनता कम करना (Thinning of flowers)-कुछ वृक्षों जैसे आम की कुछ किस्मों में अमुक वर्ष में अत्यधिक पुष्प बनते हैं। जिससे फलों की संख्या तो अधिक होती हैं परन्तु वे आकार में छोटे रह जाते हैं। ऑक्सिन जैसे-NAA का छिड़काव करके अनावश्यक पुष्पन को नियन्त्रित किया जा सकता है।

8. विलगन पर प्रभाव (Effect on abscission)-परिपक्व होने से पूर्व ही पत्तियों, फूलों का गिर जाना विलगन कहलाता है। ऐसा ऑक्सिन की कमी के कारण विलगने परत के निर्माण हो जाने से होता है। ऑक्सिन विलगन परत के निर्माण को अवरुद्ध करते हैं। NAA, 2-4 D, IBA आदि के छिड़काव द्वारा इन्हें अपरिपक्व अवस्था में झड़ने से रोका जा सकता है।

9. खरपतवारों का उन्मूलन (Eradication of weeds)-फसली पौधों के साथ अनावश्यक रूप से उगने वाले पौधे खरपतवार (Weeds) कहलाते हैं। ये पौधे जल, खनिज इत्यादि पदार्थों के लिए फसली पौधों से प्रतियोगिता करते हैं जिससे फसल की वृद्धि अच्छी नहीं होती है। ऑक्सिन के प्रयोग से इन अनावश्यक पौधों को नष्ट किया जा सकता है। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार को 2-1D (2-4 Dichloro phenoxy acetic acid) तथा 2-4-5 T (2-4-5- Trichloro phenoxy acetic acid) से जबकि घास खरपतवारों को डेलापेन (2 : 3332 dichloro propionic acid) नामक संश्लिष्ट ऑक्सिनों से नष्ट किया जा सकता

10. पर्वो का लघुकरण (Shortening of internodes)–नाशपती, सेब आदि में लघुशाखाओं पर ही फलों का निर्माण होता है। इन पौधों से NAA के छिड़काव द्वारा दीर्घशाखाओं के पर्वो को लघु करके लघुशाखाओं की संख्या में वृद्धि की जा सकती है।

11. ऊतक संवर्धन (Tissue cullture)-ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा ऊतक एवं अंगों का कृत्रिम संवर्धन व्यापक रूप से किया जाता है। इस तकनीक में ऑक्सिन मूल निर्माण एवं कैलस (Callus) विभेदने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।

प्रश्न 4. ऑक्सिन की खोज के सम्बन्ध में विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा किए गए प्रयोगों का वर्णन कीजिए।

उत्तर: ऑक्सिन (Auxins)

ऑक्सिन शब्द की व्युत्पति ग्रीक शब्द Auxin से हुई है। जिसका शाब्दिक अर्थ है “to grow” अर्थात् वृद्धि करना। ऑक्सिन ऐसा पादप हार्मोन समूह है जिसे सर्वप्रथम खोजा गया था तथा यह पौधों में प्ररोह की कोशिकाओं में दीर्धीकरण (Elongation) को प्रेरित करते हैं। तीन प्रकार के ऑक्सिन्स को सबसे पहले मानव मूत्र (Human urine) से पृथक् किया गया जिन्हें क्रमश: ऑक्सिन-a, ऑक्सिन–b तथा इण्डोल-3 एसिटिक अम्ल नाम दिये गए। ईण्डोल ऐसीटिक अम्ल व इसके समान गुण वाले सभी प्राकृतिक तथा कृत्रिम संश्लेषित पदार्थ ऑक्सिन (Auxins) कहलाते हैं।

ऑक्सिन की खोज (Discovery of Auxins)-जैव विकास सिद्धान्त के प्रवर्तक चार्ल्स डार्विन (Charls Darwin; 1890) प्रथम व्यक्ति थे जिन्हें पौधे के शीर्ष पर वृद्धिकारी पदार्थ का आभास हुआ था। चार्ल्स डार्विन एवं फ्रेन्सिस डार्विन ने केनेरी घास (Phalis canartensis) पर किये गये प्रयोगों का वर्णन अपनी पुस्तक ‘द पॉवर ऑफ मूवमेन्ट इन प्लाण्ट्स’ में किया। डार्विन के अनुसार प्रांकुरचोल (Coleoptile) को एक दिशा में प्रकाश देने पर यह प्रकाश की तरफ मुड़ता है। इन्होंने इस प्रयोग के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि प्रांकुरचोल (Coleoptile) को एक दिशिक प्रकाश देने पर कुछ पदार्थ जो शीर्ष पर बनते हैं नीचे की ओर स्थानान्तरित हो जाते हैं जिसके फलस्वरूप इस भाग में वक्रण उत्पन्न हो जाती है। डार्विन द्वारा किये गये प्रयोग को बाद में बॉयसन जेनसन तथा पाल (Boysen Jensen and Pall) ने आगे बढ़ाया।

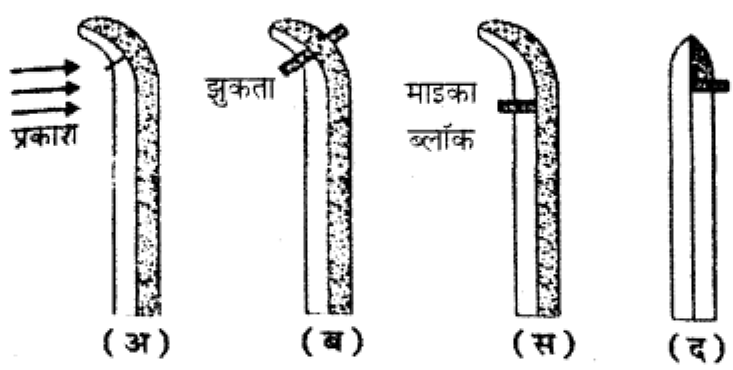

चित्र 13.5 बॉयसन-जेंनसन के प्रयोग

\

बॉयसन जेनसन (Boysen Jensen 1910-13) ने जई (Avenu Sativa) के प्रांकुरचोल पर प्रयोग किया तथा बताया कि प्रांकुरचोल का शीर्ष काट देने पर यह प्रकाशानुवर्तन (Phototropism) अथवा वक्रण

(Curving) प्रदर्शित नहीं करता है। यदि काटे हुए शीर्ष को पुनः स्थापित कर दिया जाये तो वक्रण अथवा प्रकाशानुवर्तन क्षमता पुन: स्थापित हो जाती है। शिरोच्छेदित शीर्ष व सुंठ (Stump) के मध्य जिलेटिन का टुकड़ा रखने पर भी वक्रण क्षमता बनी रहती है।

यदि प्रांकुरचोल को अप्रदीप्त सतह (Dark side) पर आधे भाग में अनुप्रस्थ चीरा (Horizontal slit) लगाकर उसमें अभ्रक की प्लेट (Micaplate) लगा दी जाती है तो प्रांकुरचोल प्रकाश की ओर नहीं मुड़ता है, परन्तु चीरा और अभ्रक र प्ले? प्रकाशित सतह (Illuminated side) पर लगाई जाए तो प्रांकुरचोला प्रकाश की ओर मुड़ जाता है। उपरोक्त प्रयोग के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकला कि प्रकाशानुवर्तन अथवा वक्रण के लिए उत्तरदायी पदार्थ या उद्दीपक अप्रदीप्त पार्श्व से नीचे की ओर स्थानान्तरित होता है।

पाल (Pall, 1919) ने भी इस सम्बन्ध में विस्तृत प्रयोग किये एवं सिद्ध किया कि शीर्षभाग में रसायन उपस्थित होते हैं जो वृद्धि प्रवर्तक होते हैं। इन्होंने यह भी बताया कि शीर्ष में उत्पन्न होने वाली पदार्थ जल में विलेयशील होता है।

ऑक्सिन की खोज का श्रेय एफ.डब्ल्यू वेन्ट (F.w.went, 1926-28) को दिया जाता है। उसने वृद्धिकारी पदार्थ को पृथक (Isolate) करने में सफलता प्राप्त की। उन्होंने जई के प्रांकुरचोल का शीर्ष काटकर उसे अगार (Agar) के घनाकार टुकड़े के ऊपर रखा। इसके पश्चात् शीर्ष को आगार से अलग करके अगार को छोटे-छोटे टुकड़ों में बाँट दिया तथा छोटे-छोटे टुकड़ों को प्रांकुरचोल (Coledoptile) के ठूठ पर स्थापित करने पर पाया कि वृद्धि उसी प्रकार पुनः स्थापित हो जाती है। इसके विपरीत साधारण अगार खण्ड को प्रांकुरचोल (Coeloptile) के ढूंठ पर रखने पर वृद्धि नहीं होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि कुछ पदार्थ प्रांकुरचोल (Coledoptile) से नीचे की ओर अगार खण्ड में स्थानान्तरित होते हैं जो वृद्धि के लिए उत्तरदायी हैं। अपने प्रयोगों के आधार पर वेन्ट ने पाया कि प्रांकुरचोल (Coledoptile) को एक ओर से प्रकाशित किये जाने पर प्रदीप्त क्षेत्र में ऑक्सिन की मात्रा कम होती है। उन्होंने अपने दूसरे प्रयोगों में जई के शीर्ष को अगार के दो टुकड़ों जिनके बीच में अभ्रक की पतली प्लेट लगी थी. इस प्रकार रखा जिससे शीर्ष आधा-आधा दोनों टुकड़ों पर रहे।

एक पाश्र्व से प्रकाश डालने पर हार्मोन का 65% भाग अप्रकाशित दिशा के टुकड़े में एकत्रित होता है।

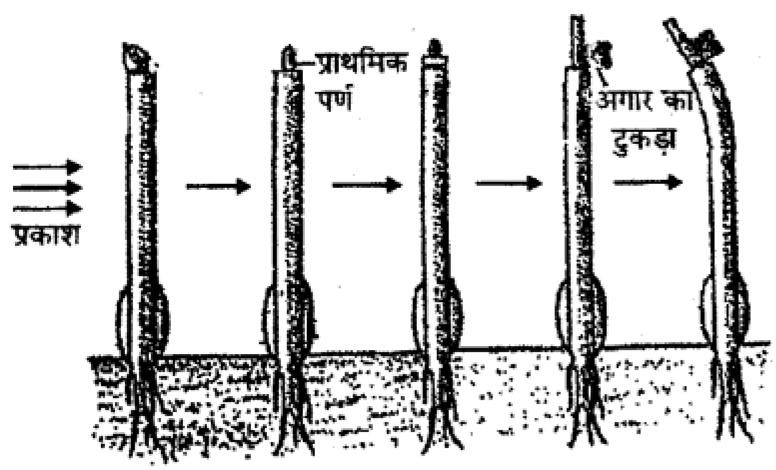

चित्र 13.6 वैन्ट का प्रयोग

अप्रकाशित भाग में हार्मोन की मात्रा अधिक होने के कारण इस भाग की कोशिकाओं का अधिक विस्तारण हो जाता है और प्ररोह प्रकाश की ओर मुड़ जाता है।| इस प्रकार कुछ दूसरे वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया कि प्रांकुरचोल अथवा मूल शीर्ष को क्षैतिज स्थिति में रखने पर हार्मोन का विस्थापन तथा प्रवाह गुरुत्वाकर्षण के कारण नीचे की ओर हो जाता है। नीचे की कोशिकाओं में ऑक्सिन की अधिक सान्द्रता प्ररोह शीर्ष के नीचे की कोशिकाओं में वृद्धि के लिए प्रेरित करती है एवं वह ऊपर की तरफ मुड़ जाता है। परन्तु मूल शीर्ष में ऑक्सिन, वृद्धि को संदमित (Retard) करता हैं। अतः नीचे की कोशिकाओं में कम वृद्धि होने से वह नीचे की ओर मुड़ जाता है।

ऑक्सिन की परिभाषा (Definition of Auxins)-वे कार्बनिक पदार्थ जो 0.01 मोलर से कम सान्द्रता में प्ररोह के विवर्धन को अभिवृद्धित करते हैं, ऑक्सिन (Auxins) कहलाते हैं।

ऑक्सिन की रासायनिक प्रकृति (Chemical nature of auxins)

कोगल (Kogal, 1931) ने उन पदार्थों को जो जई के प्रांकुरचोल (Coleoptile of oat) में वक्रता प्रेरित करने में समर्थ है को ऑक्सिन (Auxins) नाम दिया। कोगल तथा हैगन-स्मिट (Kogll and Haagensmit, 1931) ने मानव मूत्र (Human urine) से ऑक्सिन के समान पदार्थ पृथक किया। इसे इन्होंने ऑक्सिन-A (Auxina-A) नाम दिया जिसका आण्विक सूत्र $C_{18}H_{32}O_5$ होता है। ऑक्सिन को दो वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है।

1. प्राकृतिक ऑक्सिन (Natural Auxins)
2. संश्लेषित ऑक्सिन (Synthetic Auxins)

1. प्राकृतिक ऑक्सिन (Natural Auxins)
कोगल एवं साथियों ने पुनः मानव मूत्र से ही एक अन्य पदार्थ पृथक किया जिसे हेटरोऑक्सिन (Heteroauxin) नाम दिया। इसका अणु सूत्र $C_{10}H_9O_2N$ है तथा इसे इण्डोल-3-ऐसीटिक अम्ल (Indole-3acetic acid or IAA) कहते हैं। यह पौधे में पाया जाने वाला प्राकृतिक ऑक्सिन (Nautral Auxin) है। अन्य प्राकृतिक ऑक्सिन IAA के व्युत्पन्न के रूप में पाये जाते हैं। प्राकृतिक ऑक्सिन शीर्ष विभज्योतक में निर्मित होते हैं एवं इसका संश्लेषण ट्रिप्टोफन नामक अमीनो अम्ल से होता है। इसके संश्लेषण के लिए Zn अनिवार्य होता है।
प्राकृतिक ऑक्सिन

(i) इण्डोल-3-ऐसीटिक अम्ल (IAA)

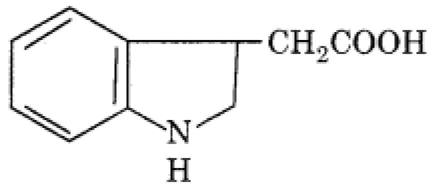

संश्लिष्ट ऑक्सिन

(ii) इण्डोल-3- ब्यूटायरिक अम्ल (IBA)

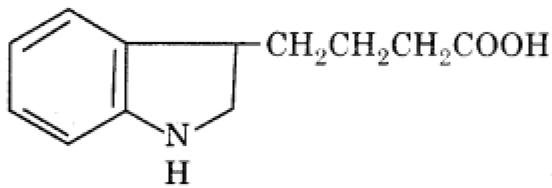

(iii) नेफ्थेलीन ऐसीटिक अम्ल (NAA)

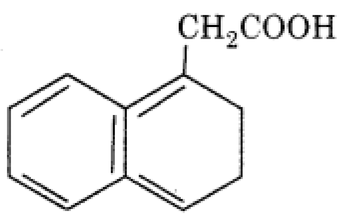

(iv) 2, 4- डाई क्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2, 4-डी)

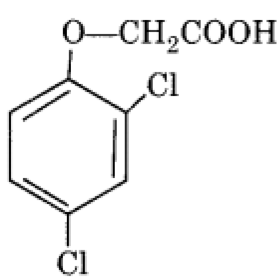

(v) 2, 4, 5- ट्राई क्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2, 4, 5-टी)

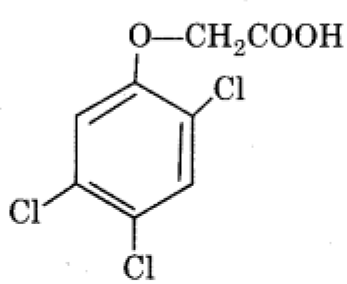

चित्र 13.7 प्रमुख ऑक्सिन्स

2. संश्लिष्ट ऑक्सिन (Synthetic Auxins)

कुछ संश्लिष्ट रासायनिक यौगिक भी ऑक्सिन के समान कार्य करते हैं। इन्हें संश्लिष्ट ऑक्सिन कहते हैं, जैसे-नैप्थैलिन ऐसीटिक अम्ल (NAA), इन्डोल 3-ब्यूटाइरिक अम्ल (IBA), 2-4 डाइक्लोरो फिनॉक्सि ऐसीटिक अम्ल (2-4D), इन्डोल 3-प्रोपियोनिक अम्ल (IPA)। पादपों के सभी भागों में आक्सिन की कुछ मात्रा उपस्थित होती है। परन्तु वृद्धि अथवा परिवर्तन ऊतकों में इसकी सान्द्रता अधिकतम होती है। ये पादप शीर्ष से आधार की ओर गमन करते हैं (ध्रुवीय अभिगमन) एवं इनका स्थानान्तरण विसरण द्वारा एक कोशिका से दूसरी कोशिका में होता है।

ऑक्सिन के कार्यिकीय प्रभाव (Physiological effects of Auxins)

1. शीर्ष प्रभाविता या शिखाग्र प्रमुखता (Apical dominance)-
शीर्षस्थ कलिका की उपस्थिति में पार्श्व अथवा कक्षस्थ कलिकाओं की वृद्धि पूर्णत: अथवा आंशिक रूप से निरुद्ध रहती है। इस स्थिति को शीर्ष प्रमुखता (Apical dominance) कहते हैं। शीर्ष कलिका ऑक्सिन का संश्लेषण करती है जो कि नीचे की ओर स्थानान्तरित हो जाता है। इसके कारण पार्श्व कलिकाओं (lateral buds) की वृद्धि रुक जाती है। यदि शीर्षस्थ कलिका को काट दिया जाए तो पार्श्व एवं कक्षस्थ कलिकाएँ विकसित होने लगती हैं। इसके फलस्वरूप पादप झाड़ीनुमा (Shruby) हो जाता है। मेंहदी तथा चने में शीर्ष कलिकाओं को तोड़कर/काटकर पौधे को झाड़ीनुमा बनाया जाता है।

2. कोशिका दीर्धीकरण (Cell elongation)-ऑक्सिन का प्रमुख कार्य प्ररोह शीर्ष (Shoot apex) में विभाजन के परिणामस्वरूप निर्मित कोशिकाओं का दीर्धीकरण (Elongation) करना है। प्ररोह में ऑक्सिन की अधिक सान्द्रता शीर्ष दीर्धीकरण को प्रेरित करती है। इसलिए प्ररोह शीर्ष धनात्मक प्रकाशानुवर्ती (Positive photoropic) एवं ऋणात्मक गुरुत्वानुवर्ती (Negative geotropic) होता है।

3. जड़ों का समारंभन (Root Initiation)-ऑक्सिन जड़ों के निकलने को प्रेरित करता है। कुछ पौधे जैसे-गुलाब, बोगेनविलिया, नींबू, सन्तरा आदि में तना या कलम लगाकर नया पौधा तैयार किया जाता है। यदि कलम के निचले सिरे को ऑक्सिन के विलयन में डुबाकर लगाया जाये तो कटे हुए भाग पर जड़े शीघ्रता से निकल आती हैं। इस कार्य के वृहद पैमाने पर सम्पादन के लिए IBA (इण्डोल ब्यूटाइरिक अम्ल) का प्रयोग किया जाता है।

4. अनिषेक फलन (Parthenocarpy)-बिना निषेचन के अण्डाशय के फल में परिवर्तित होने की क्रिया अनिषेक फलन (Parthenocarpy) कहलाती है तथा प्राप्त फल अनिषेक फल (Parthenocarpic fruits) कहलाते हैं। ये फल बीज रहित होते हैं। जैसे—सन्तरा, नींबू, तरबूज, बैंगन तथा अंगूर आदि। यदि कलिका अवस्था में पुष्पों से पुंकेसरों को निकालकर वर्तिकाग्र पर ऑक्सिन को छिड़काव कर दिया जाए तब बीज रहित अनिषेक फलों का उत्पादन होता है।

5. फसली पौधों का गिरने से बचाव (Prevention of lodging)-अनेक फसली पौधों (Crop plants) जैसे-गेहूँ (Wheat) में दुर्बलता के कारण तेज हवा के प्रभाव में पौधे जड़ के पास से मुड़कर गिर जाते हैं। छोटे पौधे के ऊपर ऑक्सिन का छिड़काव करने से पौधों का निचला भाग मजबूत हो जाता है तथा पौधों की हवा से गिरने की सम्भावना कम हो जाती है।

6. प्रसुप्तावस्था नियन्त्रण (Control of Dormancy)-ऑक्सिन बीजों तथा कन्दों में प्रसुप्तावस्था (Dormancy) बनाए रखता है। ऑक्सिन बीजों के अंकुरण (Germination of seeds) तथा कलिकाओं के

प्रस्फुटन को रोकते हैं जिससे इनका दीर्घावधि तक संग्रहण किया जा सकता है। NAA के छिड़काव द्वारा आलू के कन्दों को लगभग तीन वर्ष तक संग्रहीत किया जा सकता है।

7. पुष्पों की सघनता कम करना (Thinning of flowers)-कुछ वृक्षों जैसे आम की कुछ किस्मों में अमुक वर्ष में अत्यधिक पुष्प बनते हैं। जिससे फलों की संख्या तो अधिक होती हैं परन्तु वे आकार में छोटे रह जाते हैं। ऑक्सिन जैसे-NAA का छिड़काव करके अनावश्यक पुष्पन को नियन्त्रित किया जा सकता है।

8. विलगन पर प्रभाव (Effect on abscission)-परिपक्व होने से पूर्व ही पत्तियों, फूलों का गिर जाना विलगन कहलाता है। ऐसा ऑक्सिन की कमी के कारण विलगने परत के निर्माण हो जाने से होता है। ऑक्सिन विलगन परत के निर्माण को अवरुद्ध करते हैं। NAA, 2-4 D, IBA आदि के छिड़काव द्वारा इन्हें अपरिपक्व अवस्था में झड़ने से रोका जा सकता है।

9. खरपतवारों का उन्मूलन (Eradication of weeds)-फसली पौधों के साथ अनावश्यक रूप से उगने वाले पौधे खरपतवार (Weeds) कहलाते हैं। ये पौधे जल, खनिज इत्यादि पदार्थों के लिए फसली पौधों से प्रतियोगिता करते हैं जिससे फसल की वृद्धि अच्छी नहीं होती है। ऑक्सिन के प्रयोग से इन अनावश्यक पौधों को नष्ट किया जा सकता है। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार को 2-1D (2-4 Dichloro phenoxy acetic acid) तथा 2-4-5 T (2-4-5- Trichloro phenoxy acetic acid) से जबकि घास खरपतवारों को डेलापेन (2 : 3332 dichloro propionic acid) नामक संश्लिष्ट ऑक्सिनों से नष्ट किया जा सकता

10. पर्वो का लघुकरण (Shortening of internodes)–नाशपती, सेब आदि में लघुशाखाओं पर ही फलों का निर्माण होता है। इन पौधों से NAA के छिड़काव द्वारा दीर्घशाखाओं के पर्वो को लघु करके लघुशाखाओं की संख्या में वृद्धि की जा सकती है।

11. ऊतक संवर्धन (Tissue cullture)-ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा ऊतक एवं अंगों का कृत्रिम संवर्धन व्यापक रूप से किया जाता है। इस तकनीक में ऑक्सिन मूल निर्माण एवं कैलस (Callus) विभेदने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।

प्रश्न 5. प्रसुप्ति किसे कहते हैं ? प्रसुप्ति के कारण तथा इनको समाप्त करने के उपायों का वर्णन कीजिए।

उत्तर: प्रसुप्तावस्थी यी प्रसुप्ति (Dormant stage or Dormancy)

पादपों में बीजों का पूर्ण विकास होने के पश्चात बीजों की वृद्धि रुक । जाती है। अनुकूल वातावरणीय परिस्थितियों में कुछ पौधों के बीज अपने निर्माण के तत्काल पश्चात् अंकुरित हो जाते हैं। परन्तु कुछ अन्य पौधों में अनुकूल वातावरणीय परिस्थितियाँ उपलब्ध होने पर भी अंकुरित नहीं होते हैं। अर्थात शरीर क्रियात्मक रूप से (Physiologically) निष्क्रिय रहते हैं। बीजों की यह अवस्था प्रसुप्तावस्था (Dormant stage) कहलाती है तथा इस परिघटना को प्रसुप्ति (Dormancy) कहते हैं। प्रसुप्ति के कारण बीजों का अंकुरण अस्थायी रूप से कुछ समय के लिए निलम्बित रहता है। इसके कारण बीज दीर्घावधि तक जीवनक्षम (Viable) बने रहते हैं। निलम्बन अवधि मरुस्थलीय पादपों जैसे—बबूल (Acacia) तथा घास (Grass) में 5 से 10 वर्ष तक होती है। आर्कटिक बुण्ड्रा में लुपीन (Lupin) के बीजों में प्रसुप्तिता 1000 वर्ष

आंकी गई है। सामान्यत: अधिकांश फसली पादपों के बीज 2 से 5 वर्ष तक प्रसुप्तावस्था में रहते हैं। कुछ पादपों जैसे-राइजोफोरा, मटर इत्यादि के बीजों में प्रसुप्तावस्था अनुपस्थित होती हैं। बीजों में प्रसुप्ति अन्तर्जात अर्थात बहिर्जात कारकों के प्रभाव से होती है। अन्तजति कारक बीज की संरचना (Structure) तथा परिवर्धन (Development) से सम्बन्धित होते हैं। जबकि बहिर्जात कारक वातावरण (Environment) एवं जलवायु (Climate) से सम्बन्धित होते ।

प्राथमिक तथा द्वितीयक प्रसुप्ति (Primary and Secondary Dormancy)

जब बीज परिपक्क होने के तुरन्त पश्चात अनुकूल परिस्थितियाँ प्राप्त होने पर भी अपने आंतरिक अथवा संरचनात्मक एवं क्रियात्मक कारणों से अंकुरित नहीं होते हैं तो इसे प्राथमिक प्रसुप्ति (Primary dormancy) कहते हैं, जबकि कुछ पादपों के बीजों में परिपक्कन के पश्चात संग्रह के दौरान होने वाले परिवर्तनों से प्रसुप्ति होती है, उसे द्वितीयक प्रसुप्ति (Secondary dormancy) कहते हैं। प्रसूप्ति को प्रभावित करने वाले कारक (Factors affecting dormancy) बीजों में प्रसुप्ति अनेक अन्तर्जात एवं बहिर्जात कारकों से प्रभावित होती है जो निम्नानुसार हैं-

(1) कठोर बीजावरण (Hard seed coat)-अनेक पौधों के बीजों में बीजावरण अत्यन्त कठोर होता है। यह बीजावरण अंकुरण के लिए आवश्यक जल (उदाहरण– चना, मटर) एवं ऑक्सिन (उदाहरणजैन्थियम) के प्रति अपारगम्य (Impermeable) होता है। जिससे बीज आसानी से अंकुरित नहीं हो पाते हैं। कई बार यह यांत्रिक प्रतिरोध उत्पन्न कर भ्रूण को विकसित होने नहीं देता है। उदाहरण एमेरेन्थस।।

(2) भ्रूण की अपरिपक्कता (Immaturity of embryo)-कुछ पौधों में भ्रूण के परिपक्क होने से पूर्व ही बीजों का प्रकीर्णन (Dispersal) हो जाता है। अतः इन बीजों का अंकुरण तब तक सम्भव नहीं होता है जब तक कि भ्रूण का परिपक्कन पूरा न हो जाए। उदाहरण—गिंगो बाइलोबा (Ginkgo biloba), नीटम निमोन (Gnetum gnemone) |

(3) उत्तरपक्कन काल की आवश्यकता (Requirment of after ripening period)-कुछ पौधों के बीज परिपक्क होने के तुरन्त बाद अंकुरित नहीं हो पाते हैं। अपितु कुछ समय के विश्राम काल के पश्चात ही अनुकूल परिस्थितियों में अंकुरित होते हैं। विश्रामकाल की अवधि में ये बीज अंकुरण की क्षमता अर्जित कर लेते हैं। यह विश्राम काल उत्तरपक्कन काल (After ripening period) कहलाता है। विभिन्न जातियों में उत्तरपक्कन काल की अवधि कुछ सप्ताह से कुछ महीनों की हो सकती है। उदाहरणार्थ-गेहूँ, जौ, जई आदि।

(4) विशिष्ट तापक्रम एवं प्रकाश की आवश्यकता (Requirement of specific temperature and light)-बीजों को अंकुरण से पूर्व बीज उपचार (Seed treatment) की आवश्यकता होती है। ये बीज जब तक विशिष्ट शीत तापक्रम द्वारा उपचारित नहीं होते अंकुरित नहीं हो पाते हैं। शीत ऋतु में ये बीज प्राकृतिक रूप से उपचारित हो जाते हैं। शीत उपचार के लिए अनुकूलतम ताप 0°C से 5°C होता है। उदाहरणार्थ-चैरी, ओक आदि। सामान्यतः कुछ बीजों का अंकुरण प्रकाश की अवधि, उसकी गुणवत्ता तथा मात्रा के प्रति अति संवेदनशील होता है। ये बीज फोटोब्लास्टिक (Photoblastic) कहलाते हैं। उदाहरणार्थ-तम्बाकू तेथी कैप्सेली आदि।

(5) अंकुरण निरोधकों की उपस्थिति (Presence of germination inhibitors)-गूदेदार फलों के गूदे में उपस्थित अनेक पदार्थ बीजों के अंकुरण को रोकने में सक्षम होते हैं, इन्हें अंकुरण निरोधक (Germination inhibitors) कहते हैं। इनमें एब्सिसिक अम्ल (ABA) कौमेरिन (Coumarin), पैरा ऐस्कॉर्बिक अम्ल (Para ascorbic acid), फिनोलिक अम्ल (Phenolic acid) आदि महत्त्वपूर्ण पदार्थ हैं। बीजों के मृदा में पड़े रहने से ये पदार्थ धीरे-धीरे निक्षालित (Leached) हो जाते हैं। तत्पश्चात् बीजों का अंकुरण होता है। इन पदार्थों के निरोधी प्रभाव को जिब्बरेलिन से दूर किया जा सकता है।

बीज प्रसुप्ति दूर करने की विधियाँ (Methods of breaking seed dormancy)

बीजों की प्रसुप्ति भंग करने के लिए विभिन्न प्रकार की विधियाँ अपनायी जाती हैं जो पादप जाति एवं प्रसुप्ति कारक पर निर्भर करती हैं। प्रसुप्ति भंग करने की कुछ सामान्य विधियाँ निम्नानुसार हैं|

(1) खुरचना (Scarification)-इस विधि में कठोर बीजावरण को तोड़कर अथवा खुरचकर कृत्रिम रूप से कमजोर बना दिया जाता है। कई बार बीजों को तनु अम्ल (H_2SO_4), गरम जल अथवा वसा विलायकों में भिगोकर मुलायम बनाया जाता है।

(2) शीतन उपचार (Chilling treatment)-ऐसे बीज जिनकी प्रसुप्ति भंग करने के लिए प्राकृतिक शीत उद्भासन (Expoure) की आवश्यकता होती है, कृत्रिम रूप से शीत उपचारित कर इनकी प्रसुप्ति भंग की जा सकती है।

(3) एकान्तरिक तापक्रमों द्वारा उद्भासन (Exposure to alternate temperature)-कुछ पादप बीजों की प्रसुप्ति को क्रमशः । उच्च व निम्न तापक्रम से उद्भासित करके समाप्त किया जा सकता है।

(4) प्रकाश (Light)-कुछ धनात्मक प्रकाशस्फटी (Positive photoblastic) बीजों को लाल प्रकाश से उद्भासित करके इनकी अंकुरण क्षमता को बढ़ाया जाता है।

(5) दाब (Pressure)-कुछ प्रसुप्त बीजों को 18°C से 20°C तापक्रम पर 2000 वायुमण्डलीय दाब पर रखने से इनकी अंकुरण क्षमता बढ़ जाती है क्योंकि इससे बीजावरण (Seed coat) कमजोर हो जाते हैं। तथा इसकी पारगम्यता (Permeability) बढ़ जाती है।

(6) वृद्धि नियन्त्रकों का उपयोग (Use of growth regulators)-जिन बीजों की प्रसुप्ति का कारण शीतन उपचार की आवश्यकता, उत्तरपक्कनकाल, निरोधकों की उपस्थिति अथवा विशिष्ट प्रकाश की आवश्यकता होती है, उनकी प्रसुप्ति को वृद्धि नियंत्रकों के अनुप्रयोग से भंग किया जा सकता है। इस श्रेणी में जिब्बरेलिन, इथाइलिन, क्लोरोहाइड्रिन तथा थायोयूरिया प्रमुख हैं।

प्रश्न 6. निम्न विषयों पर निबन्ध लिखिए-

(i) जिब्बरेलिन एवं साइटोकाइनिन
(ii) वृद्धि निरोधक पदार्थ
(iii) दीप्तिकालिता

(iv) जीर्णता एवं विलगन
(v) बसन्तीकरण

उत्तर: (i) जिब्बरेलिन तथा साइटोकाइनिन (Gibberellins and Cytokinins)

जिब्बरेलिन्स (Gibberellins)

जिब्बरेलिन की खोज जापान में हुई जो चावल के एक रोग से सम्बन्धित थी। जापान में 1890 में धान (चावल) के खेतों में कुछ पौधे असामान्य रूप से लम्बे पाये गये तथा उनमें पुष्पन का अभाव था। इस रोग का नाम बेकने रोग (Bakanae disease) दिया। होरी (Hori, 1898) ने इस रोग का अध्ययन किया एवं पाया कि इस रोग से ग्रसित पौधे असामान्य रूप से लम्बे तथा पतले होते हैं। इनमें पुष्पन नहीं होता तथा ये फल एवं बीज उत्पन्न करने में असमर्थ होते हैं। अत: इन्हें बेवकूफ नवोदभिदरोग (Foolish seedling disease) कहा गया। धान का यह रोग एक कवक जिबरेला फ्यूजीकोराई (Gibberetla fujihua) द्वारा होता है। कुरोसावा (Kurosaturd, 1926) ने प्रमाणित किया कि इस कवक के स्राव को पौधों पर छिड़कने से यह रोग हो जाता है। याबुता तथा हायाशी (Yabuta and Hayashi, 1939) ने इस कवक से शुद्ध क्रिस्टलीय रसायन प्राप्त किया तथा उसे जिब्बरेलिन नाम दिया। ब्रायन तथा सहयोगियों (Brian et al, 1954) ने एकल जिब्बरेलिन का शुद्ध रूप प्राप्त किया तथा इसे जिब्बरेलिक अम्ल कहा। विभिन्न कवकों एवं उच्च पादपों से अब तक 100 से अधिक प्रकार के जिब्बरेलिन प्राप्त किये जा चुके हैं। इनको GA_1, GA_2, GA_3, GA_4......... GA_{10} आदि नामों से जाना जाता है। इनमें GA, सबसे पहले खोजे जाने वाले तथा सामान्य रूप में पाये जाने वाले जिब्बरेलिन में से एक है।

जिब्बरेलिन्स की रासायनिक प्रकृति (Chemical nature of Gibberellines)

रासायनिक दृष्टि से समस्त जिब्बरेलिन्स जिब्रेलिक अम्ल होते हैं। तथा इनकी मूल संरचना समान होती है। इसमें एक गिबेन वलय पाया जाता है। कुछ जिब्बरेलिन्स के गिबेन वलयों में 19 कार्बन तथा कुछ में 20 कार्बन परमाणु पाए जाते हैं। कुछ जिब्बरेलिन्स के रासायनिक सूत्र निम्नवत हैं—

$GA_1 – C_{19}G_{24}O_6$; $GA_2 – C_{19}H_{26}O_6$

$GA_3 – C_{19}H_{22}O_6$; $GA_4 – C_{19}H_{24}O_5$

रासायनिक दृष्टि से सभी जिब्बरेलिन टरपीन्स (Terpenes) होते हैं। इनका स्थानान्तरण अध्रुवीय होता है एवं प्रकाश से प्रभावित नहीं होते हैं।

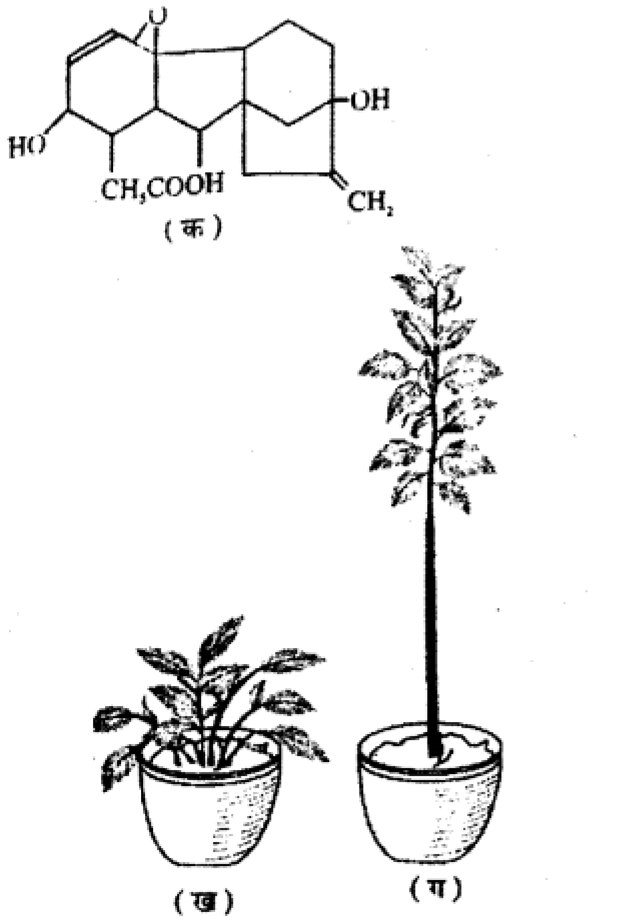

चित्र 13.8 (क) जिब्बरेलिक अम्ल (**GA,**) (ख) रोजेट पादप (ग) जिब्बरेलिन के प्रभाव से रोजेट पादप की लम्बाई में वृद्धि (बोल्टिंग)

जिब्बरेलिन्स के कार्यिकीय प्रभाव (Physiological effects of Gibberellins)

जिब्बरेलिन्स के प्रमुख कार्यिकीय प्रभाव निम्नवत हैं-

1. पर्व दीर्घन (Internode elongation)-जिब्बरेलिन पौधों में पर्व दीर्घन द्वारा पौधे की लम्बाई में वृद्धि को प्रेरित करता है। यह पत्तियों के आकार में वृद्धि को भी प्रेरित करता है। रोजेट स्वभाव वाले द्विवर्षीय पादपों में यह दीर्घित पर्णरहित पर्व के निर्माण को प्रेरित करता है। इस दीर्घित पर्णरहित पर्व को बोल्ट (Bolt) कहते हैं तथा यह क्रिया बोल्टकरण (Bolting) कहलाती है। जिब्बरेलिन उपचार द्वारा आनुवंशिक रूप से बौने पौधे को भी लम्बा किया जा सकता है। प्राकृतिक रूप से रोजेट स्वभाव का लम्बे दीर्घित रूप में परिवर्तन बोल्टकरण (Bolting) कहलाता है।

2. बीजांकुरण (Sead Germination)-धान्य फसलों जैसे—गेहूँ, जौ, मक्का आदि के बीजों के अंकुरण में जिब्बरेलिन प्रमुख भूमिका को निर्वहन करते हैं। इन खाद्यान्नों के बीज जल अवशोषित करके फूल जाते हैं तथा इनके भ्रूण जिब्बरेलिन्स का संश्लेषण करते हैं जो ऐल्युरॉन परत में विसरित हो जाता है। यह ऐमाइलेज (Amylase), प्रोटिऐज (Protease), लाइपेज (Lipase) तथा राइबोन्यूक्लिऐज (Ribonsuclease) इत्यादि इन्जाइमों के संश्लेषण को प्रेरित करता है। ये एन्जाइम भ्रूणपोष (Endosperm) में उपस्थित खाद्य पदार्थों

का अपघटन अर्थात पाचन कर देते हैं। इस प्रकार पाचन के पश्चात निर्मित उत्पाद भ्रूण के वृद्धि तथा विकास में काम आते हैं।

3. प्रसुप्ति भंग करना (Breaking of dormancy)–जिब्बरेलिन अनेक वृक्षों की कलिकाओं तथा बीजों की प्रसुप्तावस्था (Dormancy) को नष्ट कर उन्हें अंकुरित होने के लिए प्रेरित करते हैं। जिब्बरेलिन की उच्च सान्द्रता द्वारा प्रसुप्ति को निष्प्रभावी किया जा सकता है।

4. पुष्पन (Flowering)–जिब्बरेलिन, कुछ पौधे में पुष्पन के लिए प्रेरक शीत उपचार (Vernalization) अथवा अपेक्षित दीप्तिकाल (Photoperiod) का प्रतिस्थापन करने में सक्षम होते हैं।

5. अनिषेकफलन (Parthenocarpy)-ऑक्सिन की तुलना में जिब्बरेलिन अनिषेकफलन (Parthenocarpy) को प्रेरित करने में कई गुना अधिक प्रभावशाली होता है। जिब्बरेलिन द्वारा टमाटर, सेब, नाशपाती या पोम फलों या गुठली युक्त फलों में ऑक्सिन की तुलना में अधिक सुगमता से किया जा सकता है।

साइटोकाइनिन (Cytokinins)

हेबरलैण्ड (G. Haberland, 1923) ने सर्वप्रथम प्रेक्षण किया कि कुछ पादपों के फ्लोएम में कुछ विलय पदार्थ उपस्थित होते हैं जो कोशिका विभाजन को उद्दीपित करते हैं। इसके पश्चात जे. वान ओवर बीक (J. van Overbeek, 1941) ने बताया कि नारियल पानी में ऐसे पदार्थ उपस्थित होते हैं जो कोशिका विभाजन को प्रेरित करते हैं। स्कुग तथा मिलर (Skoog and Miler, 1955) ने यीस्ट के DNA से कोशिका विभाजन के लिए अत्यन्त उपयोगी पदार्थ अलग किया तथा इसे काइनेटिन (Kinetin) नाम दिया। लेथम (Letham, 1963) ने काइनेटिन को साइटोकाइनिन (Cytokinin) नाम दिया। लेथम एवं मिलर (Letham and miller, 1964) ने मक्का के भ्रूणपोष से काइनेटिन के समान पदार्थ विमुक्त किया जिसे जियाटिन (Zeatin) कहा गया। जियाटिन प्राकृतिक रूप से पाया जाने वाला प्रथम साइटोकाइनिन है।

साइटोकाइनिन की रासायनिक प्रकृति (Chemical nature of Cyatokinins)
साइटोकाइनिन न्यूक्लिक अम्लों के अपघटन से बनते हैं। संरचनात्मक दृष्टि से ये अमीनोप्यूरीन (Aminopurins) होते हैं जिनमें फरफ्यूरल वलय (Furfuryl ring) पायी जाती है। इस प्रकार प्रथम पहचाने गए साइटोकाइनिन का नाम 6-फरफ्यूरिल अमीनो प्यूरीन (6-Amino furfuryl amino purins) है।

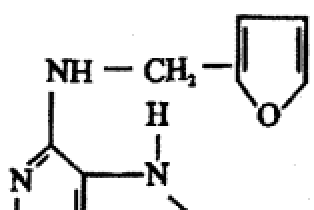

साइटोकाइनिन
(काइनेटिन-6-फरफ्यूरल एमीनो प्यूरीन)

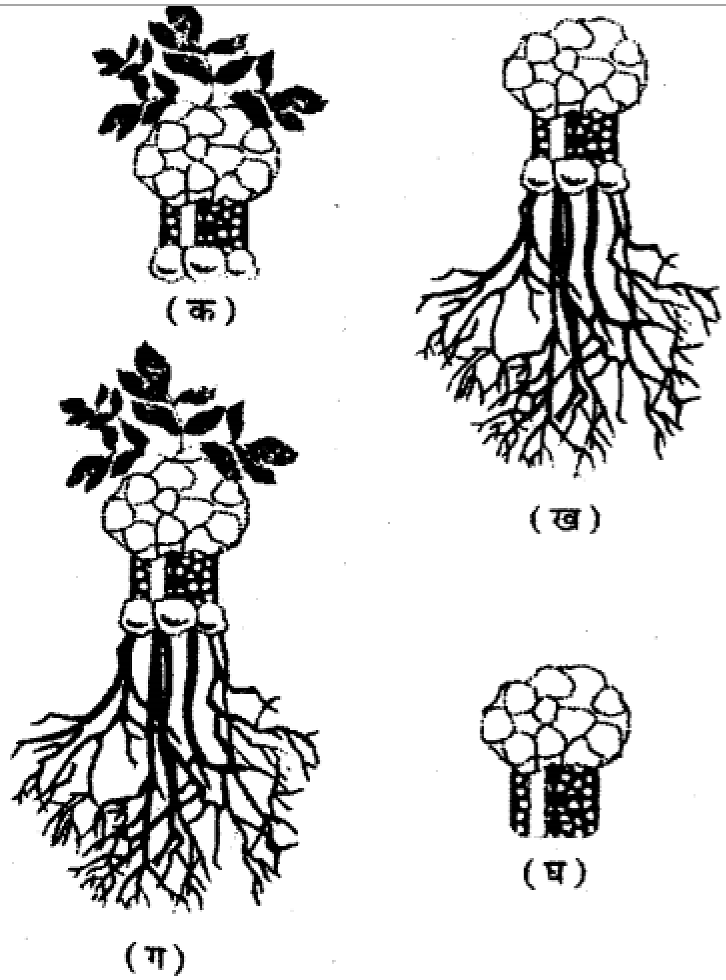

चित्र 13.9 (क) अधिक साइटोकाइनिन व कम ऑक्सिन अनुपात से केवल प्ररोह का विकास, (ख) कम साइटोकानिन व अधिक ऑक्सिन अनुपात से केवल जड़ों का विकास, (ग) मध्यम साइटोकाइनिन व मध्यम ऑक्सिन अनुपात से जड़ तथा प्ररोह दोनों का विकास, (घ) मध्यम साइटोकाइनिन व कम ऑक्सिन अनुपात से केवल कैलस

साइटोकाइनिन का संश्लेषण पादपों में उन स्थानों पर होता है जहाँ कोशिकाएँ विभाजित होती रहती हैं, जैसे—प्ररोह शीर्ष, मूल शीर्ष, विकासशील कलिका, तरुण फल इत्यादि। साइटोकाइनिन कोशिकाद्रव्य में t-RNA के संरचनात्मक घटक का कार्य करते हैं। साइटोकाइनिन के कार्यिकीय प्रभाव (Physiological effects of cytokinins)

1. कोशिका विभाजन (Cell Division)-साइटोकाइनिन, ऑक्सीजन की उपस्थिति में कोशिका विभाजन को प्रेरित करते हैं। ये पादप में विभज्योतक ऊतक (Meristematic tissue) निर्माण की क्रिया को प्रेरित करते हैं।

2. कोशिका दीर्धन (Cell elongation)—साइटोकाइनिन कोशिकाओं के दीर्घन को प्रेरित करते हैं। तम्बाकू की मूल कोशिकाएँ साइटोकाइनिन के प्रभाव से सामान्य की तुलना में चार गुना दीर्घित पाई गईं। साइटोकाइनिन यह प्रभाव, ऑक्सिन एवं अथवा एथिलीन के साथ मिलकर प्रदर्शित करता है।

3. कोशिका विभेदन (Cell differentiation)-साइटोकाइनिने कोशिका विभेदन को भी प्रभावित करते हैं तथा ऑक्सिन के साथ मिलकर पौधे में अंग निर्माण को नियन्त्रित करते हैं। साइटोकाइनिन ऑक्सिन की उपस्थिति में विभिन्न अनुपात में अलग-अलग प्रभाव उत्पन्न करते हैं। ऊतक संवर्धन (Tissue culture) प्रक्रिया में पोषक माध्यम में अधिक साइटोकाइनिन एवं कम ऑक्सिन कैलस से प्ररोह विकास को प्रेरित करता है। कम साइटोकाइनिन तथा अधिक ऑक्सिन जड़ों के निर्माण तथा विभेदन को प्रेरित करता है। दोनों की समान मात्रा में प्ररोह एवं जड़ दोनों का विकास होता है। ऊतक संवर्धन (Tissue culture) तथा आनुवंशिक अभियांत्रिकी (Genetic engineering) में पादप वृद्धि नियंत्रक अत्यधिक उपयोगी हैं क्योंकि नयी किस्म के पौधे उत्पन्न करने में कोशिका संवर्धन काफी लाभदायक सिद्ध हुआ है।

4. शीर्ष प्रभाविता का निरोध (Inhibition of apical dormancy)–साइटोकाइनिन के छिड़काव से शीर्ष प्रसुप्तता (Apical dormancy) समाप्त हो जाती है तथा पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि होने लगती है।

5. प्रसुप्तता को नष्ट करना (Breaking of dormancy)-साइटोकाइनिन द्वारा बीजों व कन्दों की प्रसुप्तता नष्ट हो जाती है एवं उनको अंकुरण के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

6. जीर्णता विलम्ब (Delaying of senescence)-पादपों में साइटोकाइनिन जीर्णता को रोकता है। सामान्यत: जीर्णता से पूर्ण पत्तियों में प्रोटीन पर्णहरित न्यूक्लिक अम्ल का विघटन प्रारम्भ हो जाता है परन्तु साइटोकाइनिन के प्रभाव से इनका अपघटन कम हो जाता है, जिससे जीर्णता के प्रभाव से इनका अपघटन कम हो जाता है जिससे जीर्णता को प्रभाव धीरे-धीरे प्रकट होता है। साइटोकाइनिन के जीर्णता विलम्ब प्रभाव को रिचमौण्ड लैंग प्रभाव (Richmond lang effect) कहते हैं।

(ii) वृद्धि निरोधक पदार्थ (Growth inhibitor substances)

वृद्धि नियामक पदार्थ (Growth Regulatory Substances)

कुछ रासायनिक पदार्थ जिनका पौधों में अल्प मात्रा में संश्लेषण होता है, वृद्धि को अत्यन्त प्रभावी तरीके से नियन्त्रित करते हैं। इन्हें वृद्धि नियन्त्रक या वृद्धि नियामक पदार्थ कहते हैं। पादपों में सर्वप्रथम वृद्धि हार्मोन का सुझाव जर्मन वैज्ञानिक जूलियस वॉन सेंक (J.Sachs, 1882) ने प्रस्तुत किया था। हार्मोन शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम स्टरलिंग (Sterling, 1902) ने किया तथा थिमैन (Thimann, 1948) ने पादप हार्मोन के लिए फाइटोहार्मोन (Phytohormone) शब्द का प्रयोग किया था। उसके अनुसार, पादप हार्मोन वे जटिल कार्बनिक पदार्थ हैं, जो पौधों में प्राकृतिक रूप से एक भाग में निर्मित होकर अन्य भागों में स्थानान्तरित हो जाते हैं जहाँ इनकी अति सूक्ष्म मात्रा वृद्धि को प्रभावित करती है। सामान्यतः ये पदार्थ पादप की कार्यिकीय गतिविधियों (Physiological activities) को प्रभावित वे नियंत्रित करते हैं।

(iii) दीप्तिकालिता (Photoperiodism)

दीप्तिकालिता (Photoperiodism)पुष्पीय पादपों में निश्चित समय तक कायिक वृद्धि (Vegitative growth) होने के पश्चात पोधे जनन अवस्था में प्रवेश करते हैं तथा उनमें पुष्पन क्रिया (Flowering) प्रारम्भ हो जाती है। कायिक अवस्था भिन्न-भिन्न पादपों में अलग-अलग होती है। पौधों में कायिक अवस्था से पुष्पन अवस्था में प्रवेश कई कारकों द्वारा नियन्त्रित होता है। इनमें से एक कारक प्रकाश की अवधि (Photoperiod), अर्थात दीप्तिकालिता (Photoperiodism) है।

पुष्पन पर दीप्तिकालिता के प्रभाव का अध्ययन सर्वप्रथम दो अमेरिकी वैज्ञानिकों गार्नर तथा एलार्ड (W.W. Garner and H.A. Allard, 1920) ने किया। इन्होंने देखा कि जब तम्बाकू की मेरीलैण्ड मैमोथ किस्म को बसन्त ऋतु में बोया जाये तो इसमें अच्छी कायिक वृद्धि के बावजूद भी पुष्पन नहीं होता है। परन्तु इस किस्म के बीजों को शरद ऋतु में ग्रीनहाउस में अंकुरित करके इनके नवोभिदों को बसन्त ऋतु के प्रारम्भ में खेतों में स्थानान्तरित कर दिया जाये तो इन पौधों में ग्रीष्म ऋतु के प्रारम्भ में ही पुष्पन हो जाता है। इस प्रयोग के आधार पर वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि पुष्पन को प्रभावित करने वाला क्रान्तिक कारक (Critical factor) प्रकाशकाले की अवधि है जिसे दीप्तिकाल (Photoperiod) कहते हैं। दीप्तिकालिता को परिभाषित करते हुए उन्होंने बताया कि "दिन की वह लम्बाई जो पौधे के पुष्पन के लिए अनुकूल हो तथा दिन की आपेक्षिक लम्बाई अथवा आपेक्षिक दीप्तिकाल के प्रति पौधे की अनुक्रिया को दीप्तिकालिता कहते हैं।" हिलमेन (Hillman, 1969) के अनुसार प्रकाश तथा अन्धकार अवधियों के अन्तरालों के प्रति पौधे की अनुक्रिया को दीप्तिकालिता (Photoperiodism) कहते हैं।

दीप्तिकालिता के आधार पर पौधों का वर्गीकरण (Classification of plants on the basis of photoperiodism)

दीप्तिकालिता अनुक्रियाओं के आधार पर पादपों को निम्न तीन वर्गों में वर्गीकृत किया जाता है

(i) अल्पदीप्तिकाली पादप या लघु दिवस पादप (Short day plants, SDP)
(ii) दीर्घ दीप्तिकाली पादप या दीर्घ दिवस पादप (Long day plants, LDP)
(iii) दिवस उदासीन पादप या दिवस निरपेक्ष पादप (Day Neutral plants, DNP)

(i) अल्पदीप्तिकाली पादप या लघु दिवस पादप (Short Day plants; SDP)
ऐसे पादप जो निश्चित क्रान्तिक दीप्तिकाल से कम अवधि का दीप्तिकाल उपलब्ध होने पर पुष्पन करते हैं, लघु दिवस पादप (Short day plants) कहलाते हैं। इन पादपों को पुष्प उत्पन्न करने के लिए 12 घण्टे से कम लम्बे दिन तथा सतत् लम्बी अन्धकार अवधि (14-16 घण्टे) की आवश्यकता होती है। अतः इन्हें दीर्घ रात्रि पादप (Long night plants) कहना अधिक उपयुक्त होता है। अगर इनके सतत् अन्धकार की अवधि को एक प्रकाश पुंज देकर तोड़ दिया जो तो पुष्पन नहीं होगा। उदाहरण–तम्बाकू, सोयाबीन, गन्ना, डहेलिया, शकरकन्द, सरसों इत्यादि।

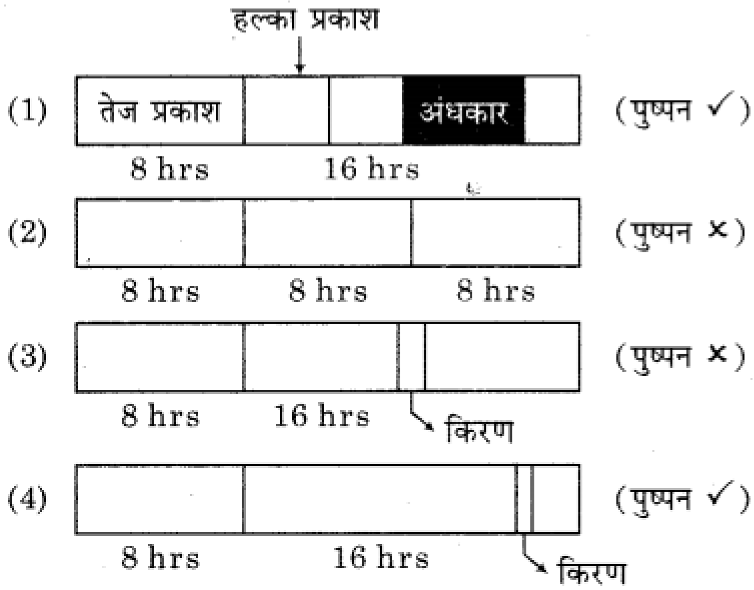

चित्र 13.11 अल्पदीप्तिकालिक पादपों की विभिन्न अवस्थाएँ

(ii) दीर्घ दीप्तिकाली पादप या दीर्घ दिवस पादप (Long Day plants, LDP)

वे पौधे जिनमें पुष्पन के लिए क्रान्तिक दीप्तिकाल से दीर्घ अवधि का । दीप्तिकाल आवश्यक होता है दीर्घ दिवस पादप (Long day plants) कहलाते हैं। इन पादपों को पुष्पन के लिए 12 घण्टे से अधिक सतत् लम्बे दिन तथा छोटी अन्धकार अवधि की आवश्यकता होती है। इन्हें अल्परात्रि पादप (Long night plants) भी कहा जाता है। इन पौधों की सतत प्रकाश अवधि को अन्धेरा देकर तोड़ने पर पुष्पन क्रिया अवरुद्ध हो जाती है।

उदाहरण-पालक, मूली, चुकन्दर, गेहूं, गाजर, आलू इत्यादि।

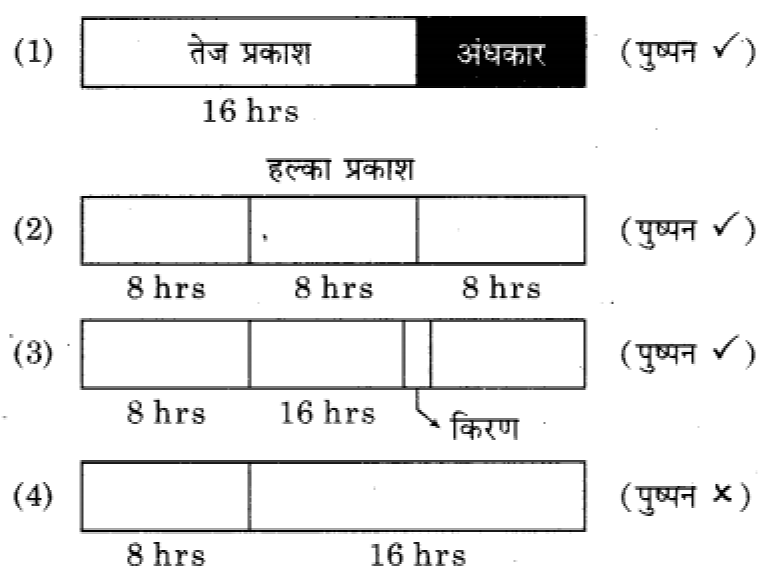

चित्र 13.12 दीर्घदीप्तिकाली पादपों की विभिन्न अवस्थाएँ

(iii) दिवस उदासीन पादप (Day Nautral plants, DNP)

वे पौधे जिनमें पुष्पन प्रक्रिया पर दीप्तिकाल का प्रभाव नहीं पड़ता है। तथा लगभग सभी सम्भव दीप्तिकालों में पुष्पन कर सकते हैं, दिवस उदासीन पौधे (Day netural plants) कहलाते हैं। उदाहरण-टमाटर, कपास, मक्का, मिर्च, सूरजमुखी इत्यादि। दीप्तिकालिक प्रेरण का स्थल (Site of photoperiodic stimulus)

दीप्तिकाल को ग्रहण करने का कार्य मुख्यत: पत्तियों एवं कलिकाओं द्वारा किया जाता है। चैलियाखान (1936) वैज्ञानिक ने अपने प्रयोगों से यह निष्कर्ष निकाला कि केवल पत्ती ही दीप्तिकालिक उद्दीपन ग्रहण करने में तरुण पत्तियों की तुलना में पूर्ण विस्तारित तथा विकसित पत्तियाँ अधिक संवेदी (Senstive) होती हैं। पूर्णत: परिपक्व या पुरानी पत्तियों में उद्दीपन के प्रति संवेदनशीलता धीरे-धीरे कम होती जाती है। प्रकाश उद्दीपन का संचरण (Transmission) पत्तियों से पुष्पन कलिकाओं को फ्लोयम के माध्यम से होता है परन्तु इसका संचरण प्रकाश संश्लेषित उत्पादों के संचरण से स्वतंत्र होता है। दीप्तिकालिता की क्रियाविधि (Mechanism of photoperiodism)

पौधे में दीप्तिकालिता की क्रियाविधि को स्पष्ट करने के उद्देश्य से कई सिद्धान्त प्रस्तुत किये गये हैं। इनमें से कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्त निम्न हैं-

1. फ्लोरीजन परिकल्पना (Florigen hypothesis)

इसे चैलीयाखान परिकल्पना भी कहते हैं। जिसके अनुसार एक विशिष्ट दीप्तिकाल में पौधों में पुष्प निर्माण को प्रेरित करने वाला एक हार्मोन बनता है जिसे फ्लोरीजन (Florigen) कहते हैं। यह हार्मोन पत्तियों में बनता है।

फ्लोरीजन हार्मोन दो यौगिकों का सम्मिश्र होता है।

(i) जिब्बरेलिन-स्तम्भ के परिवर्धन एवं वृद्धि के लिए आवश्यक।
(ii) एन्थेसिन्स-पुष्पन प्रेरण के लिए आवश्यक।

जिब्बरेलिन दीर्घदीप्तिकाली (LDP) पादपों के लिए आवश्यक होता है। तथा एन्थेसिन्स अल्प दीप्तिकालीन पादपों के लिए आवश्यक होता है। जब दीर्घ दीप्तिकालिक पौधे को अल्पकालिक प्रकाश में रखा जाता है तो उसमें एन्थेसिन्स अधिक मात्रा में तथा जिब्बरेलिन कम मात्रा में बनता है लेकिन जैसे ही उक्त पौधों की पत्तियों को दीर्घकालिक प्रकाश मिलता है। जिब्बरेलिन की मात्रा एक साथ बढ़ती है और पौधे में पुष्पन (Flowering) प्रारम्भ हो जाता है।

अल्प दीप्तिकालिक पौधों (SDP) में विपरीत स्थिति होती है। जब SDP को दीर्घ दीप्तिकालिक प्रकाश में रखा जाता है तो उसमें जिब्बरेलिन की मात्रा अधिक व एन्थेसिन्स की मात्रा कम होती है।
लेकिन जैसे ही उक्त पौधे की पत्तियों को अल्पकालिक प्रकाश मिलता | है एन्थेसिस की मात्रा एक साथ बढ़ती है और पौधे में पुष्पन क्रिया प्रारम्भ | हो जाती है। अभी तक एन्थेसिस जैसे किसी पदार्थ का पृथक्करण या | अभिव्यक्तिकरण नहीं किया जा सका है। इसलिए इस संकल्पना को स्थापित नहीं किया जा सका है।

2. फाइटोक्रोम सिद्धान्त (Phytochrome theory)

यह सिद्धान्त बोर्थविक तथा हेण्डरिक्स (Borthwick and hendricks; 1950) द्वारा प्रतिपादित किया गया था। इस सिद्धान्त के अनुसार पौधों की पत्तियों के ऊतकों में एक प्रकाशग्राही वर्णक उपस्थित होता है जिसे फाइटोक्रोम (Phytochrome) कहते हैं।

फाइटोक्रोम चमकीला नीला, नीलहरित प्रोटीन युक्त पदार्थ है जो अन्तः परिवर्तनशील रूपों में पाया जाता है। फाइटोक्रोम के ये दो रूप क्रमशः P_{730} (Phytochrome far red, pfr) तथा P_{660} (Phytochrome red) है। P_{730} वर्णक 730 nm 730 nm तंरगदैर्ध्व वाले प्रकाश के अवरक्त विकिरणों (Infrared radiations) को अवशोषित करता है तथा P_{660} वर्णक 660 nm तरंदैर्ध्व वाले प्रकाश के लाल विकिरणों (Red radiations) को अवशोषण करके P_{660} में परिवर्तित हो जाता है।

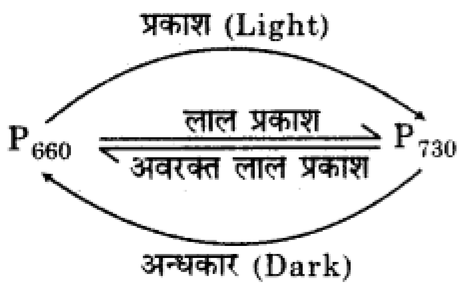

चित्र 13.13 फाइटोक्रोम सिद्धान्त का रैखिक चित्रण

दिन (प्रकाश) की उपस्थिति में फाइटोक्रोम का pfr स्वरूप पौधे में पर्याप्त मात्रा में एकत्रित हो जाता है जो SDP में पुष्पेन को अवरुद्ध करता है जबकि LDP में पुष्पने को प्रेरित करता है। जब सूर्य अस्त हो जाता है। तब उपर्युक्त क्रिया की विपरीत क्रिया होती है। क्योंकि अन्धकार में pfr रूप Pr की मात्रा में वृद्धि होती है जिससे SDP में पुष्पन प्रेरित होता है। जबकि LDP में पुष्पन अवरुद्ध होता है। ऐसा माना जाता है कि फाइटोक्रोम में दोनों उपर्युक्त स्वरूप पुष्पी हॉर्मोन के निर्माण को नियन्त्रित करते हैं जो कि पुष्पन क्रिया को प्रभावित करता है।

(iv) जीर्णता एवं विलगन (Senescence and Abscission)

जीर्णता (Senescence)

कोई भी जीवधारी अमर नहीं है। पृथ्वी पर उपस्थित किसी भी जीव का एक समय जन्म होता है तथा कुछ समय व्यतीत होने के पश्चात उसकी मृत्यु हो जाती है। जीवधारी के जन्म एवं मृत्यु के मध्य की अवधि उसका जीवनकाल (Life span) कहलाती है। सभी सजीवों के जीवन काल में परिपक्वन अवस्था प्राप्त करने के पश्चात इस प्रकार की अवनतकारी क्रियाएँ (Deterioratire processes) होती हैं जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है। अत: किसी भी जीवधारी की परिपक्व अवस्था से लेकर मृत्यु तक के काल को जीर्णता (Sensecence) कहते हैं। इस अवधि में जीवधारी कमजोर हो जाता है तथा उसकी कार्य-क्षमता में कमी आ जाती है। उपापचयी पदार्थ संग्रहित हो जाते हैं तथा जीवधारी के शुष्कभार (Dry weight) में कमी आती है। लियोपोल्ड (A.C. Leopold 1961) ने पादपों में चार प्रकार की जीर्णता का वर्णन किया है

(1) सम्पूर्ण पादप जीर्णता (whole plant senescence)-बहुत से एकवर्षीय पादप जैसे गेहूँ, चना, टमाटर इत्यादि में फल निर्माण के पश्चात सम्पूर्ण पादप पीला होकर अन्ततः मृत हो जाता है।

(2) शीर्ष अथवा प्ररोह जीर्णता (Apex or shoot senescence)-इस प्रकार की जीर्णता में पादप का ऊपरीभूमिक भाग प्रतिवर्ष मृत हो जाता है तथा भूमिगत तना एवं जड़े जीवित बनी रहती हैं। अगले वर्ष उपयुक्त मौसम में भूमिगत भाग में कलिकाएँ उत्पन्न होती हैं जो वायव भाग का पुनः निर्माण करती हैं।

(3) पर्णपाती जीर्णता (Deciduous senescence)—बहुत से पादपों में पतझड़ में पत्तियाँ मृत होकर झड़ जाती हैं लेकिन मूल तथा स्तम्भ जीवित रहते हैं। अनुकूल परिस्थितियाँ आने पर पत्तियाँ पुनः विकसित हो जाती हैं।

(4) क्रमिक जीर्णता (Successive senescence)-अधिकांश वार्षिक पादपों में सामान्य परिवर्धन में पुरानी पत्तियाँ पहले जीर्ण होकर मृत हो जाती हैं। इसके पश्चात अन्य पत्तियाँ, तना, एवं जड़े जीर्ण होकर मृत होती हैं इसे क्रमिक जीर्णता कहते हैं।
वृद्धि हार्मोन ABA तथा इथाइलिन जीर्णता को प्रेरित करते हैं। ABA प्रमुख रूप से पर्ण जीर्णता तथा इथाइलिन फलों में जीर्णता को तीव्र करते हैं। ऑक्सिन, जिब्बरेलिन एवं साइटोकाइनिन अधिकतर मामलों में जीर्णता को स्थगित करने में सक्षम होते हैं।

विलगन (Abscission)

पादपों में पत्तियों, पुष्पों एवं फलों का मातृ पादप से प्रथक होकर गिर जाना विलगन (Abscission) कहलाता है। विलगन एक जैविक क्रिया (Vital activity) है जो पादपों के इन अंगों के आधारीय भाग की कोशिकाओं में परिवर्तन के परिणामस्वरूप होती है। इन स्थलों पर एक निश्चित क्षेत्र की कोशिकाओं की मध्य पटलिकाओं (Middle lamellae) एवं बाह्य भित्तियों का पेक्टीनेज तथा सेल्युलेज एन्जाइमों द्वारा पाचन हो जाता है जिससे मध्य पटलिकाओं एवं भित्ति के टूटने से कोशिकाएँ एक दूसरे से पृथक हो जाती हैं। इस क्षेत्र के ऊतक मुलायम तथा कमजोर हो जाते हैं तथा इस स्थान पर एक विलगन परत (Abscission layer) का निर्माण हो जाता है।

विलगन परत के नीचे की कोशिकाएँ विभाजनशील होकर कॉर्क कोशिकाओं (Cork cells) का निर्माण करती हैं जिसमें एक रक्षात्मक स्तर अथवा विलगन क्षेत्र (Abscission zone) का निर्माण होता है। वायु के तेज झोंकों के कारण अथवा वर्षा के परिणामस्वरूप पादप अंग विलगने परत वाले स्थान से टूटकर पादप से पृथक होकर गिर जाते हैं।
विलगन की क्रिया हार्मोन असन्तुलन के कारण होती है। इस प्रक्रिया में एब्सिसिक अम्ल महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।

यह भी जानें

- पौधों में घावों का भरना ट्रोमेटिन नामक फाइटोक्रोम के कारण होता है।
- इथाइलीन मिथियोनीन नामक अमीनो अम्ल से बनता है।
- मैलिक हाइड्राजाइड एक प्रति-जिब्बरेलिन होता है।
- इथाइलीन से ”स्लीप डिसीज’ होता है।

- जीर्णावस्था को साइटोकाइनिन लम्बित करता है। इसे रिचमोण्ड लैंग प्रभाव कहते हैं। साइटोकाइनिन की अधिकता से बिचेज ब्रूम रोग हो जाता है।

(v) बसन्तीकरण (Vernalization)

वसन्तीकरण (Vernalization)

अधिकांश पौधों की पुष्पन (Flowering) क्रिया पर उचित दीप्तिकाल के अतिरिक्त तापक्रम का गहरा प्रभाव पड़ता है। पौधों के तापक्रम के प्रति व्यवहार का सर्वप्रथम वैज्ञानिक अध्ययन लायसन्को (Lysenko, 1928) ने चावल को दो किस्मों शीत किस्म तथा वसन्त किस्म (Winter and spring variety) पर किया था।

एकवर्षीय पादपों में पुष्पन पर प्रकाश का मुख्य प्रभाव पड़ता है तथा ताप का प्रभाव द्वितीयक (Secondary) होता है। द्विवर्षीय पादपों में स्थिति भिन्न होती है। इनमें प्रथम वर्ष में केवल कायिक वृद्धि होती है तथा पुष्पन क्रिया द्वितीय वर्ष में सम्पन्न होती है, किन्तु पुष्पन से पूर्व इन्हें शीत ऋतु के निम्न तापक्रम में उद्भासित (Expose) तथा उपचारित करना आवश्यक होता है।

शीत प्रभाव के अभाव में इन द्विवर्षीय पौधों में जनन प्रावस्था प्रारम्भ नहीं होती है तथा पौधे कायिक अवस्था में ही बने रहते हैं। शीतकालिक किस्मों में कम तापमान की आवश्यकता को कृत्रिम शीत उपचार द्वारा पूरा किया जा सकता है जिससे इनमें ग्रीष्म ऋतु में पुष्पन कराया जा सके। पौधों में शीत उपचार द्वारा पुष्पन प्रेरण की यह क्रिया वसन्तीकरण (Vernalization) कहलाती है। कोअर्ड (Choird, 1960) के अनुसार शीत उपचारों द्वारा पुष्पन की योग्यता के उपार्जन को वसन्तीकरण कहते हैं। वसन्तीकरण की तकनीक अत्यन्त सरल है। इसमें सर्वप्रथम बीजों को भिगोकर अंकुरण के लिए छोड़ दिया जाता है। इसके पश्चात अंकुरित बीजों को कम तापमान पर (0°C से 5°C) उपचारित किया जाता है। शीत उपचार का समय जाति एवं किस्म के अनुसार भिन्न-भिन्न होता है। यह कुछ घण्टों से लेकर कुछ सप्ताह तक हो सकता शीत उपचार से पत्तियों में हार्मोन के समान कुछ ऐसे पदार्थों का निर्माण होता है। जो वसन्तीकरण को नियन्त्रित करते हैं। मेल्चर्स (Melchers, 1939) ने इस पदार्थ को वर्नेलिन (Vernalin) नाम दिया। लैंग (Lanng, 1952) के अनुसार वर्नेलिन पुष्पन क्रिया को प्रारम्भ करने वाले हामें फ्लोरीजन (Florigen) का पूर्वगामी (Precorser) है।

शीतकालिक पादप $\xrightarrow{\text{कम तापमान}}$ वर्नेलिन $\xrightarrow{\text{प्रेरक दीप्तिकाल}}$ फ्लोरीजन $\longrightarrow$ पुष्पन

वर्नेलिन वे फ्लोरीजन दोनों काल्पनिक हार्मोन हैं जिनको अभी तक | पृथक्करः सम्भव नहीं हुआ है। पादप के भ्रूण तथा विभज्योतक शीत उपचार के ग्राही अंग हैं।

यदि बसन्तीकृत बीजों या पौधों को अधिक तापक्रम से उपचारित किया जाता है तो बसन्तीकरण का प्रभाव नष्ट हो जाता है इसे विबसन्तीकरण (Devernalization) कहते हैं।